विज्ञान कुसुम



विज्ञान कुसुम

श्री जगत् बिहारी सेठ

एम० ए० (केम्ब्रिज) ; आई० ई० एस० (रिटायर्ड)

श्री मेहर चन्द सेठ

एम० एस-सी० ; फेलो पंजाब यूनीवर्सिटी

अत्तरचन्द कपूर एण्ड सन्ज़

देहली, अम्बाला, आगरा ।

Printed by
H. K. Kapur at the Agra University Press, Agra
and Published by Shree Ram Jawaya Kapur,
Proprietor Uttar Chand Kapur & Sons
Delhi, Ambala & Agra.

विषय-सूची



आँधी

1—हवा की बातें

आज केवल तीन ही व्यक्ति शाम की सैर के लिए बाहर निकले थे। रवि, चन्दा और पिता जी। माता जी को एक तो रसोई में कुछ काम था और दूसरे ऐसा प्रतीत होता था कि आँधी आने वाली है और आँधी या तेज़ हवा लगने से उनका सिर दुखने लगता था।

तीनों अभी थोड़ी ही दूर गये थे कि आँधी आ ही गई। आँधी भी थी काली। पश्चिम की ओर, जिधर से आँधी आ रही थी, आसमान बिल्कुल काला हो गया था, मानों काली घटा छायी है। थोड़ी ही देर में कालापन सारी जगह छा गया। आँधी का इतना ज़ोर था कि चलना भी कठिन था। रवि ज़ोर से अपनी टोपी पकड़े हुए था, चन्दा का दुपट्टा उड़ कर पीछे लहरा रहा था, इतने ज़ोर से, मानों कि गला ही घोट देगा। और अधिक दूर जाना प्रायः असम्भव हो गया और घर लौटना पड़ा।

लौटते हुए चंदा और रवि में बातें होने लगीं। चंदा ने पूछा—रवि! हवा क्या है? इसमें इतना बल कहाँ से आया? देखो तो, हवा के ज़ोर से पेड़ों के तने भी

झुके जा रहे हैं।

रवि—मैं नहीं जानता। पिता जी ही बतला सकते हैं कि हवा क्या चीज़ है।

बच्चों की बातें पिता जी सुन रहे थे। घर पहुँचने पर उन्होंने कहा—तुम दोनों हैरान हो रहे थे कि हवा क्या है। रवि ने बिना जाने ही इस प्रश्न का उत्तर दे दिया, जब उसने कहा कि वह नहीं जानता कि हवा क्या चीज़ है। हवा सचमुच ही एक चीज़ है। मेज़, कुर्सी, पलंग घड़ी, बेंच, डेस्क आदि की तरह हवा भी एक वस्तु है।

चंदा—यह बात मेरी समझ से बाहर है। मेज़, कुर्सी, और दूसरी चीज़ों को तो हम देख सकते हैं, पकड़ भी सकते हैं, परन्तु हवा को तो न ही देख सकते, न पकड़ सकते हैं। फिर कैसे हवा भी मेज़, कुर्सी की तरह की चीज़ हो सकती है।

आँधी का वेग अब कम हो गया था। पिता जी ने कहा, चलो रसोई में चलें, जहाँ तुम्हारी माता ने अपने को बन्द कर रक्खा है। वहीं दिखलायेंगे कि हवा भी मेज़, कुर्सी की तरह एक चीज़ है, क्योंकि उसको भी जगह चाहिए, और जिसको रहने या ठहरने के लिए जगह चाहिए, उसके चीज़ होने में कोई सन्देह नहीं हो सकता, चाहे उसे देख सकें या नहीं। आँखें बन्द कर लो तो मेज़, कुर्सी आदि कुछ दिखाई नहीं देगा। पर फिर भी तुम जानते

हो कि वे विद्यमान हैं। यदि उनसे कहीं टकरा जाओ तो उनके होने में कोई सन्देह नहीं रह जाता।

रसोई में पहुँच गये थे। माता जी ने हवा और गर्द से रसोई की चीज़ों को बचाने के लिए खिड़की और दरवाज़े सब बन्द कर रक्खे थे। इतने और लोगों के पहुँचने से दम घुटने लगा। आंधी लगभग बन्द हो चुकी था, खिड़कियां दरवाज़े खोल दिये गये। माता जी ने बच्चों के चेहरों पर उत्सुकता देख कर पूछा, "कहो क्या बात है?" रवि ने कहा, पिता जी कहते हैं कि हवा भी मेज़, कुर्सी की तरह एक चीज़ है, यद्यपि दिखलाई नहीं देती। अभी-अभी यह कहते हुए आ रहे थे कि यदि आँख बन्द कर लें तो मेज़ कुर्सी भी नहीं देख सकते। परन्तु न दिखलायी देते हुए भी यदि कहीं उनसे टक्कर लग जाय तो कोई सन्देह नहीं रह जाता कि वे विद्यमान हैं। परन्तु हवा तो आँख खुली हुई होने पर भी दिखलायी नहीं देती और न ही उसके साथ कोई टक्कर लगती है।

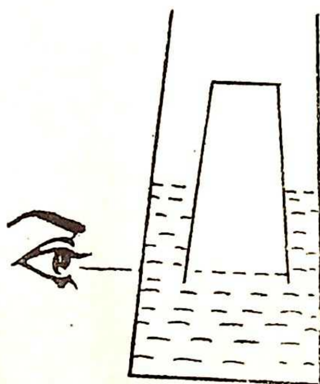
पिता जी ने मुस्करा कर कहा— वाह, लला जी, हवा के विरुद्ध अभी-अभी चलना कठिन था और अन्त में उसने आगे न चलने दिया, घर वापस लौट आना पड़ा; और फिर भी कहते हो कि हवा से टक्कर नहीं लगती। अस्तु! अभी देखोगे कि हवा स्थान घेरती है और इसलिए अवश्य

एक चीज़ है। बेटी, एक शीशे का गिलास लाओ और

रवि, वह बड़ा जग तो पानी से भरो, कोई तीन-चौथायी।

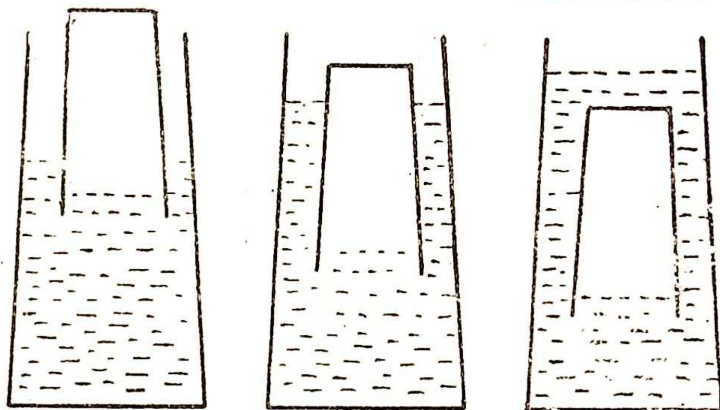
चंदा कटावदार गिलास उठाने लगी। पिताजी ने कहा, "नहीं, कटावदार नहीं, वह सादा गिलास लाओ।" गिलास लेते हुए पिताजी ने पूछा, यह गिलास है तो ख़ाली न ? इसमें कुछ है तो नहीं ? रवि, चंदा, दोनों ने उत्तर दिया, "हाँ, बिल्कुल ख़ाली है।"

पिता जी ने गिलास औंधा कर जग के पानी पर रख दिया और लगभग आधा गिलास पानी में डुबो कर बच्चों से कहा कि देखो गिलास में पानी की सतह जग के जल-तल से ऊँची है या नीची। ऊपर से मत देखो, क्योंकि इस तरह इस बात का ठीक अनुमान नहीं कर सकते। एक ओर से देखो ताकि गिलास का डूबा हुआ मुँह और तुम्हारी आँखें एक ही ऊँचाई पर हों।



आकृति १: पानी में औंधाये हुये गिलास के देखने की विधि

बच्चों ने इस प्रकार जब देखा तब बड़े चकित हुए। अब उनको साफ़ दिख गया कि गिलास के अन्दर पानी की सतह बाहर के पानी से नीची थी। पिता जी ने गिलास को पहले पानी में इतना डुबोया कि उसका मुँह पानी से केवल कोई आध इञ्च नीचे था। फिर आधा गिलास डुबो दिया। फिर पूरा और अन्त में गिलास इतना डुबो दिया कि जग के पानी की सतह गिलास के



आकृति २—पानी में औंधाये हुए गिलास की तीन स्थितियाँ

पेंदे से भी उपर थी। * रवि और चन्दा को यह देख

---

* शिक्षक के प्रति— यदि शीशे का जग न हो तो किसी बालटी या दूसरे चौड़े मुँह वाले गहरे बरतन में पानी भर कर, उसमें गिलास औंधा कर यही परिणाम निकाल सकते हैं। अब ठीक तरह नहीं देख सकेंगे कि गिलास के भीतर पानी का तल कहाँ । एक तो काफी रोशनी नहीं पहुँच सकेगी और दूसरे

कर बड़ा ही अचम्भा हुआ कि प्रत्येक स्थिति में गिलास पानी से लगभग बिल्कुल ख़ाली रहा। जब बिल्कुल डूबा था तब भी पानी उसके अन्दर बहुत ही थोड़ा सा चढ़ा था।

2—हवा को जगह चाहिए

यह सब देख सुनकर बच्चों को बड़ा अचम्भा हुआ। पिताजी ने समझाया कि तुम जिस गिलास को खाली समझते थे वह सचमुच ख़ाली नहीं था, उसमें हवा भरी थी। हवा भी एक चीज़ है। जैसे और सब चीज़ों को रहने के लिए जगह चाहिए, वैसे ही हवा को भी। गिलास में हवा भरी है, भरी जगह में पानी कैसे जा सकता है ?

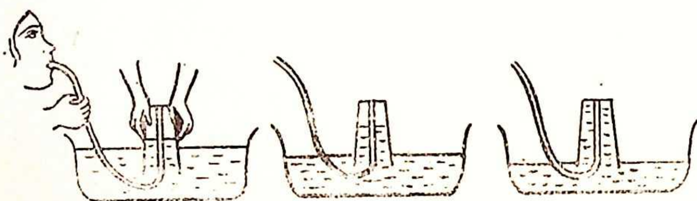
ऊपर से ही देख सकेंगे। तो अब गिलास के अन्दर, मुँह से कोई आध इंच नीचे, स्याही का एक चिन्ह बनाकर, गिलास औंधाइए; यदि चाहें तो पूरा डुबा दीजिए; केवल, औंधाते, डुबोते या निकालते समय, हवा बाहर न जाने पावे। गिलास निकालने पर देखेंगे कि स्याही का निशान ज्यों का त्यों है। यदि वहाँ तक पानी पहुँचा होता तो ऐसा न हो सकता। साफ़ है कि इस प्रकार प्रयोग करने में गलास शीशे का ही होना आवश्यक नहीं।

अब बच्चों को पूरा विश्वास हो गया कि हाँ सचमुच ही हवा को भी रहने के लिये जगह चाहिए। और फिर तो उनको हवा के जगह रोकने वाले गुण के और भी बहुत से दृष्टान्त सूझे—फुटबाल, रबड़ का गेंद, बाइ-सिकल और मोटरगाड़ी के हवा से भरे हुए पहिये, आदि।

परन्तु आज का तमाशा अभी समाप्त नहीं हुआ था। पिताजी ने कहा—अच्छा, अभी देखो एक और कौतुक, हवा को हम गिलास से बाहर निकाल देंगे। रवि और चन्दा के चेहरों पर फिर अचम्भे की झलक दिखाई दी। रवि ने कहा—यह तो देखो कि हवा जगह रोकती है परन्तु हवा को पकड़ तो नहीं सकते। फिर कैसे बाहर निकालिएगा? पिता जी ने कहा, जाकर तनिक अलमारी से रबड़ की नली का एक टुकड़ा तो ले आओ, फिर हवा को गिलास से बाहर निकाल देंगे।

रवि रबड़ की नली ले आया। पिता जी ने गिलास को औंधा कर बाल्टी पर रख दिया कि उसका मुँह पानी में हो गया। रवि से कहा इसको पकड़ कर रक्खो, गिलास सीधा ही रखना टेढ़ा न होने देना। पर गिलास था बड़ा, रवि का छोटा सा हाथ उसको ठीक तरह से खड़ा न रख सका। गिलास ज़रा टेढ़ा हो गया, हवा "गड़ गड़" करके बाहर निकल गयी, गिलास पानी से भर गया। पिताजी ने कहा—ख़ैर, कुछ हानि नहीं हुई।

अभी तक मैंने तुम लोगों से स्पष्ट रूप से नहीं कहा परन्तु जब मैंने गिलास पानी पर औंधाया, तब बड़ी सावधानी से, इस बात पर ध्यान रखते हुए कि गिलास का मुँह बिल्कुल सपाट होकर पानी को छुए, अर्थात् गिलास टेढ़ा न हो, बिल्कुल सीधा रहे। यदि टेढ़ा औंधाया जाय तो भीतर की हवा थोड़ी या बहुत निकल भागती है, और फिर जो जगह हवा रोके थी वह खाली हो जाती है और अब पानी वहाँ पहुँच कर खाली जगह भर देता है।" यह कह कर पिताजी ने गिलास का पानी निकाल कर फिर सावधानी से पानी पर औंधा दिया और रवि से कहा कि दोनों हाथों से गिलास को थामे रक्खो कि फिर टेढ़ा न होने पावे।



आकृति ३— गिलास से हवा निकाली जा रही है। तीन स्थितियाँ

इसके बाद रबड़ की नली मोड़ कर एक सिरा तो उन्होंने गिलास के अन्दर, ऊपर तक कर दिया। दूसरा सिरा जो बालटी से बाहर था उसको चन्दा के हाथ में पकड़ा कर कहा—इसको मुँह में रख कर ज़रा मुँह से

तो साँस लो, बेटी! चन्दा ने मुँह से साँस लेना, अर्थात्

हवा खींचना या सोखना शुरू किया। जैसे-जैसे सोखती या खींचती गई, पानी से गिलास भरता गया। थोड़ी देर में पूरा गिलास भर गया और अब चन्दा के खींचना ज़ारी रखने पर उसका मुँह पानी से भरने लगा।

माता जी अपना काम करते हुए यह सभी देख सुन रही थीं। उन्होंने अब कहा—क्यों रवि, हवा को निकाल बाहर किया कि नहीं। हवा निकालने पर गिलास सचमुच ख़ाली हो जाता है पर पानी के होते हुए जगह ख़ाली नहीं रह सकती। इसलिए पानी उसमें जा पहुँचता है, चाहे ऐसा करने के लिए पानी को ऊपर ही क्यों न चढ़ना पड़े।

रवि और चन्दा की समझ में आ तो गया कि हवा अवश्य एक चीज़ है—एक पदार्थ है; लेकिन कुछ बातें अब भी मन में खटक सी रही थीं। चन्दा ने पूछा—यदि सोखने से हवा को निकाल कर जगह ख़ाली कर सकते हैं और पानी के रहते हुए कोई जगह ख़ाली नहीं रह सकती, तो इस तरह से पानी को नीचे से ऊपर के गुसलखाने में क्यों नहीं पहुँचा देते। रवि ने कहा—इसमें तो सन्देह नहीं रह गया कि हवा सचमुच एक चीज़ है। परन्तु यदि चीज़ है तो उसका बोझ होना चाहिए, पर हवा का बोझ नहीं।

माता जी ने कहा, कौन कहता है कि हवा का बोझ नहीं। परन्तु अब देर अधिक हो गयी है, खाना खाने का समय हो गया है। कल पिता जी तुम को प्रत्यक्ष दिखलायेंगे कि हवा का भी बोझ है। और चन्दा, तुमने जो पूछा कि पानी इस तरह से हवा के सोखे जाने पर ऊपर क्यों नहीं पहुँचा सकते, उसका उत्तर है कि अवश्य पहुँचा सकते हैं परन्तु केवल कुछ ही ऊँचाई तक। यह ऊँचाई है कोई २५ या ३० फ़ुट। वास्तव में जो घर में हाथ का नलका लगा हुआ है, जिसको ऊपर नीचे करने से पानी ज़मीन के अन्दर से निकल आता है, वह इसलिए कि पानी २५, ३० फ़ुट की ऊँचाई तक पहुँचाया जा सकता है। परन्तु केवल इतनी ही ऊँचाई तक क्यों, और यह सब क्यों होता है और कैसे—यह जानने के लिए अभी तुम दोनों को कुछ ठहरना पड़ेगा। सम्भवतः, पिता जी कल इस विषय की ओर भी कुछ संकेत करदें।

3—हवा का बोझ और दबाव

कल शाम से, जब से सुना था कि हवा बोझीली है और पिता जी आज सवेरे यह बात दिखलावेंगे, तब से चन्दा और रवि के मन कुतूहल से भरे थे। सवेरा होते ही नहा धोकर, प्रातराश करके, पिता जी से कहा कि हवा

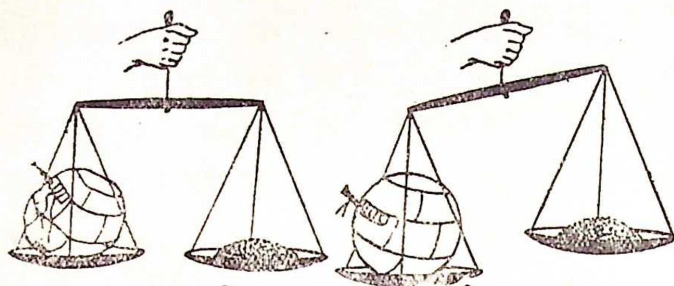
की जगह रोकना तो आप कल सिद्ध कर चुके थे, अब यह भी दिखलाइए कि वह बोझीली है।

पिताजी ने कहा—अच्छा, लो अभी दिखला देते हैं। चन्दा ! तुम जाकर भण्डार से तराज़ू तो ले आओ। एक डब्बे में थोड़ा सा अनाज भी लेते आना। और बेटा रवि, तुम जाकर अपना फुटबाल और पंप ले आओ

सब चीज़ें आ जाने पर, पिता जी ने रवि से कहा कि फुटबाल की हवा निकाल दो, परन्तु ब्लैडर के नल को बाँधने वाला फीता उसी में लगा रहने दो।

तराज़ू उठाकर पहले तो पिता जी ने बच्चों को दिखला दिया कि जब पलड़े खाली हैं, तब डंडी सीधी, बिना इधर-उधर झुके रहती है। फिर हवा से रिक्त अर्थात् खाली फुटबाल उठाकर उन्होंने तराज़ू के एक पलड़े में रख दिया। दूसरे पलड़े में अनाज रखकर तराज़ू उठाया और अनाज न्यूनाधिक करके फुटबाल का पासंग कर लिया कि डंडी बिल्कुल सीधी रहे। इसके बाद रवि से कहा, अच्छा अब फुटबाल को खूब भरो। जब रवि भर चुका तब पिताजी ने स्वयं और हवा भर दी, क्यों कि रवि में अभी इतना बल नहीं था कि फुटबाल बिल्कुल ठूस-ठूस कर भर सके। ब्लैडर की नली फीते से अच्छी तरह बाँधकर, अब जब तराज़ू उठाया, तब बच्चों ने देखा कि पासंग बिगड़ गया। फुटबाल वाले

पलड़े की ओर तराज़ू की डंडी झुक गयी। जिससे साफ़ प्रकट हो गया कि हवा में भी बोझ होता है।



आकृति ४–वायु-भार प्रदर्शक

यदि चमड़े (कवर) से निकाल कर केवल ब्लैडर के साथ ही यह प्रयोग किया जाय तो बाज़ारी तराज़ू से हवा का बोझ नहीं दिखलाया जा सकता, क्योंकि अब बहुत हवा नहीं भर सकते और बाज़ारी तराज़ू में इतना सामर्थ्य नहीं कि इतना कम बोझ दिखला सके। हाँ, जिस तराज़ू से सुनार सोना आदि तोलते हैं उससे केवल ब्लैडर से भरी हवा का बोझ भी दीख जाता है। प्रयोग शालाओं में इससे भी बढ़िया तराज़ू होते हैं जिनसे छोटे से खिलौना-गुब्बारे में भरी हवा का बोझ भी दिखला सकते हैं।

यह सब देख सुन कर बच्चे चकित तो अवश्य हुए पर उन्हें यह निश्चित रूप से विश्वास हो गया कि हवा में बोझ है। पिताजी ने और भी बतलाया—

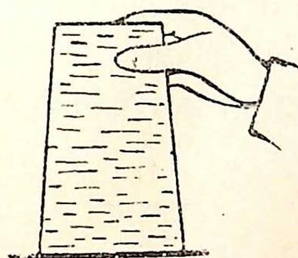
इसमें सन्देह नहीं कि ब्लैडर या बैलून में भरी हवा

का बोझ बहुत कम है, परन्तु जानते हो कि हवा कितनी

अधिक इस धरती पर विद्यमान है ? रवि और चन्दा भला अभी यह क्या जानते। उन्होंने तो आज अपनी छोटी सी जीवनी में पहली बार यह सुना और देखा था कि हवा भी एक चीज़ है, दूसरी चीज़ों की तरह जगह लेती है और बोझीली भी है। पिताजी ने कहा—

हवा भूतल पर सैंकड़ों मील तक फैली हुई है--चार पाँच सौ मील की ऊँचाई पर भी थोड़ी-थोड़ी हवा है। इतनी ऊँचाई तक फैली हुई होने के कारण, सारी हवा का बोझ लाखों करोड़ों मन से भी अधिक हो जाता है।

इस बोझ के कारण ऊपर की हवा नीचे की हवा को दवाये रखती है, अर्थात् दवाव डालती है। लो एक और तमाशा देखो।



आकृति ५—वायु--दाब प्रदर्शक

यह कहकर पिताजी ने एक गिलास पानी से भर दिया और उसका मुँह एक गत्त े से ढक दिया। और फिर गत्त े को हाथ से थाम कर गिलास उलट दिया

और गत्ते के नीचे से हाथ हटा लिया। रवि और चन्दा

को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि ढक्कन जहाँ का तहाँ ठहरा रहा, गिलास का पानी भी गिलास के भीतर ही रहा। पिताजी ने कहा कि इसमें अचम्भे की क्या बात है। गत्ते पर ऊपर से तो पानी का बोझ उसको खोलकर गिराने का यत्न कर रहा है। नीचे से हवा का दबाव गत्ते को ऊपर उठा रहा है। हवा का दबाव गिलास के पानी के बोझ से अधिक है इसलिये गत्ता नहीं गिर सकता। इस तरह से हवा का दबाव कोई ३४ फुट लम्बे पानी के खम्भे को थामे रख सकता है। इस प्रकार के प्रयोगों में केवल एक बात का ध्यान रखना पड़ता है कि गिलास पानी से बिल्कुल भरा हो और गत्ता ठीक तरह से उसके मुँह पर बैठे ताकि गत्ते और पानी के बीच हवा न रह जाय। उलटते समय भी यह ध्यान रखना चाहिए कि कहीं हवा भीतर न चली जाय। यदि कहीं से हवा घुस जाय तो पानी गत्ते को ढकेलकर गिर जायगा ।

———

4—वायुभार की कहानियाँ

इस बात को जाने हुए अभी कोई तीन-सौ साल ही हुए हैं कि हवा का भी बोझ है जिसके कारण हवा दबाव डालती है। इस जानकारी के पहले लोग यह समझते थे कि पानी या और किसी द्रव की पहुँच होते हुए कोई स्थान भी शून्य नहीं रह सकता, अर्थात् कोई जगह बिल्कुल खाली नहीं रह सकती। इससे कोई दो हज़ार वर्ष पहले यूनान अर्थात् ग्रीस देश के ज्ञान-विज्ञान वेत्ताओं ने एक मत ठहराया था कि "प्रकृति को शून्य से घृणा है।" प्राचीन यूनानियों के इस आदेश पर लोगों का पूर्ण निश्चय था।

इस मत पर विश्वास करके इटली के एक बड़े रईस, टस्कनी नामक प्रान्त के एक ड्यूक ने अपने बाग़ में एक गहरे कुएँ से पानी निकालने के लिये बड़े ख़र्च और परिश्रम से जल-पंप बनवाया, अर्थात् ऐसी पिचकारी जिसके द्वारा कुएँ का पानी खींच कर ऊपर पहुँचाया जा सके।

पिताजी रवि और चंदा को यह कहानी सुना रहे थे। बच्चों ने पूछा कि फिर क्या हुआ। टस्कनी के ड्यूक साहब को सफलता हुई या नहीं!" पिता जी ने कहा—

नहीं, कुएँ में पानी बड़ी गहराई पर था। पंप लग जाने के बाद जब मज़दूरों ने उसको चलाया तो पानी ने उतना ऊँचा उठने से इनकार कर दिया। पंप के नल में कोई ३० फुट तक तक तो पानी उठ आता था, परन्तु पंप के पिस्टन को कसने का कितना ही यत्न किया गया, पानी इसके ऊपर नहीं आया, यद्यपि पिस्टन पूरी ऊँचाई तक जाता था और पिस्टन तथा पानी के बीच शून्य था। यह देख कर ड्यूक साहब को बड़ी हैरानी हुई।

इटली, इटली क्या यूरुप भर में, उन दिनों के सबसे बड़े विद्वान थे, उनका नाम था गलिलिओ। ड्यूक ने इन्हीं के पास अपने विस्मय का समाचार पहुँचाया कि इस समस्या को हल करें। प्राचीन यूनानियों का सिद्धान्त था कि "प्रकृति को शून्य से घृणा है", क्या कहीं गलत तो नहीं था? गलिलिओ साहब धुरंधर विद्वान थे। ऐसी-ऐसी बहुतेरी समस्याएँ वे हल कर चुके थे। सारा हाल सुनने के बाद वे ताड़ गये कि बात क्या थी। परन्तु गलिलिओ अब बहुत बूढ़े थे। इसलिए इन्होंने यह काम अपने एक शिष्य और मित्र को सौंपा। इनका नाम था टारीसेली। अपने गुरु गलिलिओ की निगरानी में टारीसेली साहब ने समस्या का सारा भेद खोल निकाला और न केवल सिद्ध कर

दिखाया कि हवा का भी बोझ होता है और इसलिए

दबाव; अपितु बोझ और दबाव कितना है, यह भी निकाल डाला।

पिता जी ने कहना जारी रक्खा वायु-भार और वायुदाब के बारे में एक बड़ी मनोरंजक कहानी और सुन लो। इनकी जानकारी के कई बरसों बाद, जर्मनी के मैग्ड-लबर्ग नामक एक शहर में आटो वान ग्यूरिक नाम के एक साहब नगराध्यक्ष नियुक्त हुए। आपकी इन बातों में बड़ी रुचि थी और अभी-अभी आविष्कृत हुए वायु पंप अर्थात् हवा निकालने वाले पंप और साथ ही साथ हवा के दबाव, वायु-दाब से भी शहर के लोगों का परिचय करवाने के लिये उन्होंने एक बड़ा जलसा करवाया।



वायु दाब का जलसा

इसके लिए उन्होंने ताँबे की मोटी चद्दर के दो अर्द्ध-गोले बनवाये। इनके किनारे 'पंखदार' थे, अर्थात् बाहर की ओर थोड़े निकले हुए, जिससे एक दूसरे पर ठीक जम कर बैठ सकें। इस तरह बैठाने के बाद "पंखों" के बीच से हवा का आना-जाना बिल्कुल बन्द करने के लिये, उनके बीच चमड़े का एक चिपटा छल्ला अर्थात् "वाशर" भी था।

हर एक अर्द्ध-गोले के बाहर एक-एक कड़ा दृढ़ता से जड़ा था। जिसके द्वारा अर्द्ध गोले में घोड़े जुतवाये जा सकते थे। एक अर्द्ध-गोले में नल लगा था, ताकि इस नल का वायु पंप के नल से सम्बन्ध कराके हवा निकाली जा सके।

वायु पंप द्वारा अर्द्ध-गोलों के जोड़ से बने हुए गोले की हवा निकलवा कर और दोनों ओर घोड़ों की एक-एक जोड़ी जुतवा कर, ग्यूरिक ने घुड़सवारों को आज्ञा दी कि घोड़े अब चलाओ। परन्तु घोड़ों ने कितना ही बल लगाया, चल न सके, क्योंकि दोनों घोड़े एक ही जैसी शक्ति के थे और अर्द्ध गोले एक दूसरे के साथ सारी हवा के बोझ से दबाये जा रहे थे। तब दोनों ओर दो दो घोड़े जुतवा दिये, पर फिर भी गोला न खुल सका। जब कहीं दोनों ओर चार-चार जोड़ियाँ जुतीं; एक दूसरे के पीछे, तब जाकर हवा के बोझ की बराबरी हुई

और अर्धगोले एक दूसर से छुट पाये।

बच्चों ने बहुत मन लगाकर इस कहानी को सुना। उनके चेहरे अचंभे और उत्सुकता से भरे हुए थे। जल पंप, वायु पंप, वायुदाब तथा वायुभार की नाप, आदि सब बातों का नाम उन्होंने आज पहले पहल सुना था। पर इन सब का ठीक परिचय पाने के लिए उन्हें अभी बहुत दिन ठहरना था।

5—साँस लेना और जलना

पिताजी—यह सुनकर तुम लोग बड़े चकित होगे कि जलना और साँस लेना एक जैसी ही बातें हैं।

चंदा—वाह! यह कैसे हो सकता है? कहाँ जलना और कहाँ साँस लेना? जलने में तो चीज़ें जलकर राख हो जाती हैं, परन्तु हम तो जैसे के तैसे बने रहते हैं।

पिताजी—ठीक है बेटी! जलती हुई चीज़ें बड़ी जल्दी जल जाती हैं, हम बहुत धीरे-धीरे जलते हैं; इतना धीरे कि मालूम ही नहीं होता।

रवि और चंदा—भई! यह तो हमारी समझ के बाहर है।

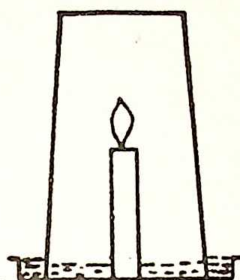
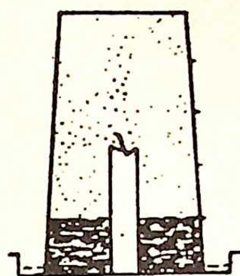
पिताजी—अभी समझ के अन्दर आ जायेगी। रवि, जाकर एक गहरी तश्तरी और एक शीशे का गिलास ले आओ। गिलास पानी से भरते लाना। और चंदा बेटी, तुम जाकर एक मोमबत्ती, दियासलाई

और थोड़ा-सा चूना ले आओ।

रवि और चंदा सब चीज़ें ले आये। पिता जी ने पूछा, "तुम यह तो जानते हो कि हवा का सबसे बड़ा उपयोग यही है कि इससे हम साँस लेते हैं। हवा के बिना साँस नहीं ले सकते।" दोनों बच्चों के 'जी हाँ' कहने पर पिताजी ने और पूछा, "क्या यह भी जानते हो कि जलने के लिए भी हवा चाहिए"? बच्चे सोच में पड़ गये। पिताजी ने कहा, "अच्छा पहले तो तुमको यह दिखलाते हैं कि जैसे साँस लेने के लिए हवा चाहिए वैसे ही जलने के लिए भी।"

पिता जी ने चूना गिलास के पानी में डाल कर एक लकड़ी से पानी को अच्छी तरह हिला-डुला दिया। थोड़ी देर में चूना पैंदे पर बैठ गया और पानी देखने में पहले जैसा ही रहा पर पिता जी ने रवि और चंदा को चखवा कर दिखलाया कि उसमें थोड़ा-सा चूना घुल गया था। इसके बाद उन्होंने मोमबत्ती तश्तरी के बीचों बीच चिपका दी। और तश्तरी में गिलास से चूने का पानी डाल कर गिलास धुलवा लिया। फिर मोमबत्ती जला कर गिलास को उस पर औंधा कर दिया (आ० 6—2)। थोड़ी देर जलती रहने के बाद मोमबत्ती बुझ गयी। बच्चों ने कहा कि "पिता जी, अब क्यों बुझ गयी और एक और भी अचरज की बात।

पानी गिलास में चढ़ गया है (आ० 6—2) और साथ ही सफेद, दुधीला-सा भी हो गया है"*

1 2

आकृति 6 मोमबती का बुझना

पिताजी—इस छोटे से प्रयोग से कई बातें निकलती हैं। एक तो यह कि जलने के लिए हवा चाहिए। जैसे जैसे मोमबत्ती जलती है, वैसे वैसे ही गिलास के अन्दर की हवा कम होती जाती है, क्योंकि जलने में हवा खर्च

---

* शिक्षक के प्रति—पान में खाने या दीवार पोतने वाला चूना बुझा हुआ चूना होता है। काम तो इससे भी चल सकता है, परन्तु चूना-पानी बनाने के लिये अन बुझे अर्थात् कच्चे या ताज़े चूने का व्यवहार श्रेयस्कर है। अन बुझे चूने का डला पानी में डालने से स्वयं फूट जाता है और पानी गरम हो जाता है। बुझे या अनबुझे चूने के कण पहले तो पानी में लटकते रते हैं पर कुछ समय बाद बैठ जाते हैं और स्वच्छ चूना-पानी रह जाता है। जिसको सावधानी से दूसरे पात्र में डाल लीजिये। यदि जल्दी हो तो ब्लाटिंग काग़ज़ से छान लीजिये। मोमबत्ती की लम्बाई गिलास की कोई एक तिहाई से बड़ी न होनी चाहिए। अच्छा होगा कि लंबा और सादा गिलास लिया जाय।

होती है। परन्तु जलते समय एक गैस बनती है, जिसका नाम है कार्बनडाई आक्साइड। इस गैस में एक गुण है कि चूने के पानी में मिलकर उसको सफेद या दुधीला कर देती है।

जैसे-जैसे मोमबत्ती जलती है, हवा कम होती जाती है, पर कार्बन डाइआक्साइड बनती रहती है। परन्तु यह चूने के पानी में मिलती रहती है। इसलिए जैसे-जैसे मोमबत्ती जलती है, गिलास में गैस की कमी होती जाती है, अर्थात् गिलास सचमुच खाली होता रहता है, अतएव खाली जगह को भरने के लिए पानी ऊपर उठता रहता है।

रवि—परन्तु पिताजी, मोमबत्ती बुझ क्यों गई? हवा तो अभी भी गिलास में विद्यमान है, क्योंकि यदि हवा न होती तो पूरा गिलास पानी से भर जाता।

पिताजी—जो गैस गिलास में अब है, वह यदि हवा होती तो बत्ती के बुझने का कोई कारण न होता और वह जलती रहती। बत्ती के बुझ जाने से सिद्ध हुआ कि जो गैस अब गिलास में है वह हवा नहीं। वास्तव में, बच्चो, हवा अधिकतर दो गैसों का बनी हुई है। आक्सीजन और नाइट्रोजन। इन दोनों में से केवल आक्सीजन ही ऐसी गैस है जो कि चीज़ों को जला सकती है या जिसमें चीज़ें जल सकती बिना

आक्सिजन के ज्वलन-क्रिया अर्थात् जलना असंभव

है। दूसरी गैस, नाइट्रोजन, ज्वलन-क्रिया की बाधक है। इसमें चीज़ें नहीं जल सकतीं। जलती हुई चीज़ नाइट्रोजन में रख दी जाय तो तुरन्त बुझ जाती है।

इस प्रकार दो बातें सिद्ध हुईं कि जलने के लिए एक तो हवा चाहिए और दूसरे, जलने पर कार्बन-डाइ-आक्साइड बनती है। *अब यदि दिखला दें कि साँस लेने में भी कार्बन डाइ-आक्साइड बनती है, तब तो मान जाओगे कि साँस लेना भी जलना ही समझना चाहिए।

रवि और चंद्रा—जी हाँ।

पिताजी—अच्छा अब इसी गिलास को चूने के

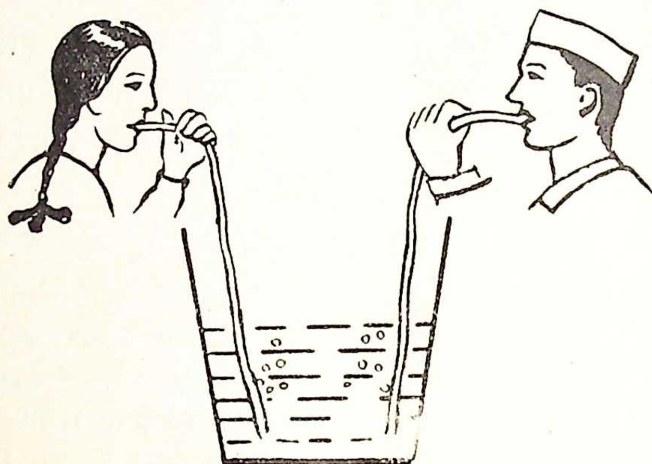
---

* शिक्षक के प्रति—एक तीसरी बात भी इस प्रयोग से निकलती है, यद्यपि प्रस्तुत विषय से उसका बहुत सम्बन्ध नहीं। वह यह कि वायु में नाइट्रोजन आक्सिजन से अधिक है। इसी प्रयोग में ठीक नाप लेकर दिखला सकते हैं कि, मोटी तौर से, वायु के 5 भागों में ना० के 4 और आ० का केवल एक भाग है।

एक चौथी बात और निकलती है जिसका प्रस्तुत विषय से घना सम्बन्ध है और जो कदाचित् आप स्वयं, कह के, बतलाना चाहेंगे। पर इसको दिखलाने के लिए औंधाया गिलास बिलकुल सूखा और ठंडा होना चाहिए। जब मोमबत्ती (या कोयला या लकड़ी या और कोई ऐसी चीज़) जलती है तब जल वाष्प का भी निर्माण होता है, जो कि गिलास की सतह पर जम कर उसको शुरू शुरू में धुँधला कर देगा। इसी प्रकार निकाली हुई सांस में भी भाफ होती है।

निकली हुई साँस गरम भी होती है।

पानी से भर दो। फिर अब एक-एक छोटी-सी रबड़ की नली लेकर, एक सिरा तो मुँह में रक्खो और दूसरा इस चूने के पानी से भरे गिलास में डाल कर हाथ से पकड़े रक्खो और थोड़ी देर तक रबड़ नल द्वारा चूना-पानी में फूँकते रहो।



आकृति 7—चूना—पानी में फूँकना

थोड़ी देर ऐसा करने के बाद रवि और चंदा ने देखा कि चूना-पानी सचमुच सफेद होने लगा। (अधिक देर तक फूँकते रहने से चूना-पानी फिर साफ हो जाता है। इसको 'क्यों' तुम अभी नहीं समझ सकते।) इससे उनको पूरा विश्वास हो गया कि साँस लेते समय साधारण हवा फैफड़ों में जाती है पर निकाले हुए साँस में कार्बन-डाइ-

आक्साइड गैस होती है और इसलिए जलना और साँस लेना एक जैसी ही क्रियाएँ हैं। भेद केवल इतना ही है कि साँस लेना बहुत ही धीरे-धीरे जलना है।

और साथ ही यह परिणाम भी निकला कि आक्सि-जन और नाइट्रोजन के अतिरिक्त, कार्बन-डाइ-आक्साइड भी हवा का एक अंश है, क्योंकि जलने तथा सभी जीवितों के साँस से यह गैस निकल कर हवा में मिलती रहती है।

6—पानी उड़ना

चन्दा ने सोचते-सोचते पूछा—"पिता जी, जब गीले कपड़े सूखते हैं, तब पानी कहाँ चला जाता है ?"

पिता जी—पानी भाफ़ बन कर उड़ जाता है। यह नहीं, जहाँ भी हो वहीं से पानी उड़ता रहता है। किसी साफ़ कटोरी में, हो सके तो शीशे की कटोरी में, यदि थोड़ा सा पानी डाल कर उसे किसी ऐसी जगह रख दो जहाँ खुली हवा लगती रहे, पर पानी के गिरने या जान-वरों द्वारा पिये जाने का खटका न हो तो देखोगी कि पानी की मात्रा के हिसाब से थोड़ी या अधिक देरी में सब पानी उड़ जायगा। करके देख लो।

चन्दा—तो पिता जी ! हवा में भी पानी होना चाहिए ?

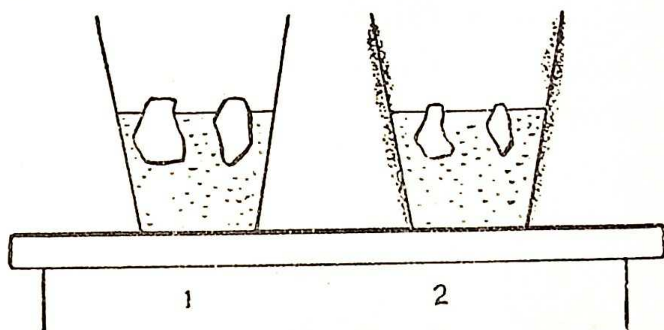
पिता जी—हाँ बेटी, हवा में आक्सिजन, नाइट्रोजन कार्बन डाइ आक्साइड, इन तीन गैसों के सिवाय पानी भी होता है। परन्तु यह पानी द्रव अवस्था में नहीं, किन्तु गैस की अवस्था में होता है। इसको जल गैस या जल वाष्प कहते हैं।

चन्दा—परन्तु पिता जी, यदि पानी हवा में होता है तो हमें मालूम क्यों नहीं पड़ता ?

पिता जी—बेटी, पानी की तरह जल वाष्प अर्थात् पानी की गैस भी बिना किसी रंग या गंध की है और गैस की अवस्था में होने के कारण न उसे देख सकते हैं न छू सकते हैं। परन्तु जैसे पानी उड़ कर गैस बन गया था वैसे ही गैस को जमा कर पानी बना सकते हैं। देखो अभी दिखाता हूँ। ले आओ वही शीशे का गिलास पानी से आधा भर कर, और माता जी से दो तीन डले बरफ भी माँग लाना।

रवि पानी से अध-भरा गिलास ले आया, चन्दा एक तश्तरी पर रख कर बरफ के तीन चार टुकड़े ले आयी। पिता जी ने गिलास को बाहर से अच्छी तरह से पोंछ कर सूखा कर लिया। गिलास के भीतर जो हिस्सा पानी से भरा नहीं था, उसको भी पोंछ कर सूखा कर दिया। अब उसके अन्दर धीरे से बरफ़ के टुकड़े डाल दिये। धीरे से, ताकि पानी छलक कर गिलास के सूखे

हिस्सों को फिर गीला न कर दे। थोड़ी देर के बाद चंदा बोली, "पिता जी, गिलास चिटका हुआ होगा। देखिए, पानी गिलास के बाहर भी आ गया है।" रवि गिलास के पास जा कर ध्यान से देखने लगा; पर कहीं कोई चिटकन न दिखलायी पड़ी, अपितु उसके पास आने पर गिलास पर का पानी और भी अधिक हो गया। हैरान हो कर पिता जी की ओर देखने लगा। पिता जी ने कहा—



आकृति 8—ठंडे पानी का गिलास।
1—बरफ़ अभी डाली ही गयी।
2—थोड़ी देर के बाद।

बच्चो, यह पानी गिलास के अन्दर से नहीं निकला। हवा में जो पानी वाष्प के रूप में था, वह ठंडे गिलास पर लगने से ठंडा होकर, जमकर फिर पानी बन गया। जिस समय रवि गिलास के पास पहुँचकर उसे देख रहा था उस समय उसकी निकाली हुई साँस की

भाफ भी ठंडे गिलास पर लगकर, ठंडी हो जाने से जम कर, बैठ गयी और इसलिए गिलास पर और भी पानी आ गया।

जानते हो कि बहुधा शीशे को साफ़ करने के लिए उस पर 'अह' करके मुँह से हवा लगाते हैं और फिर कपड़े या हाथ से ही पोंछने से शीशा साफ हो जाता है। जो हवा फेफड़ों से बाहर निकलती है उसमें केवल यही नहीं कि कार्बन-डाइ-आक्साइड की भरमार होती है उसमें जल-वाष्प की भी भरमार होती है। शरीर के अन्दर से आने के कारण यह गरम होती है। गरम जल-वाष्प को ही भाफ कहते हैं। शीशा प्रायः शरीर से ठंडा होता है। ठण्डी सतह पर लगकर भाफ जम जाती है, पानी की एक पतली तह शीशे पर पड़ जाती है और उसको पोंछकर हटाते समय शीशे पर जो मैल, गर्द थी वह भी पुंछ जाती है, मानो शीशे को पानी से धोकर साफ़ कर दिया हो।

यह सब सुनकर चन्दा बोल उठी—अच्छा, तो यहा पानी हमारे कपड़ों से उड़कर हवा में गया था।

पिताजीं—हाँ कपड़ों में से ही नहीं, जहाँ कहीं भी पानीं हो, खड़ा हुआ, चलता हुआ या केवल चीज़ों को गीला ही रखता हुआ, भाफ बनकर उड़ जाता है, चाहे गर्मी हो चाहे सर्दी। केवल जब गर्मी अधिक होती है

अर्थात् टैंपरेचर अधिक होता है, तब पानी अधिक और

अधिक जल्दी उड़ता है। जब आग पर रखकर पानी का टैंपरेचर बहुत अधिक कर देते हैं, तब तो वह खौलने लगता है, कहते हैं कि पानी उबल रहा है उबलते, खौलते हुए पानी से जल वाष्प बहुत ही अधिक और जल्दी-जल्दी बनता है और इस गरम वाष्प को भाफ कहते हैं। साँस से निकली हुई हवा गरम होती है, इसी लिए साँस की गरम जल-वाष्प को भी भाफ कहते हैं।

यही सब वाष्प उड़कर, ऊपर पहुँच कर, ठंडा होने पर फिर द्रव पानी बन जाता है और बरसकर फिर पृथ्वी पर आ गिरता है।

———

7 हवा की अस्वच्छताएँ और उनका शोधन

पिता जी—चन्दा, तुमने बहुधा देखा होगा कि प्रातः काल ही हर एक चीज़ पर महीन-महीन गर्द जमी होती है चाहे रात को सोने जाने के पहले चीज़ों को झाड़न से पोंछकर साफ भी कर दिया हो और हवा न भी चली हो। विशेष रूप से वे चीज़ें जो खुले मैदान में पड़ी हों। जानती हो कि यह गर्द कहाँ से आयी।

चन्दा—पिता जी आप ही बताइये।

पिता जी यह सब हवा ही से आती है। तुमको बतला चुके हैं कि हवा में चार गैसें हैं—नाइट्रोजन, आक्सिजन, जल वाष्प और कार्बन डायाक्साइड।

परन्तु इन चारों के अतिरिक्त हवा में बहुधा साधारण रूप से, और भी चीज़ें होती हैं जो कि स्वच्छ, विशुद्ध हवा में नहीं होनी चाहिएँ और जो कि हवा को अस्वच्छ कर देत

प्रधान अस्वच्छताएँ अर्थात् गंदगियां दो प्रकार की होती हैं। एक तो तरह-तरह के ठोस पदार्थों के छोटे-छोटे कण, जैसे रेत या धूल, मट्टी नमक, कोयला आदि दूसरे तरह तरह की गैसें हैं। कार्बन डाइआक्साइड यद्यपि स्वच्छ हवा का अंश हैं, परन्तु तभी जब कि वह बहुत ही कम हो—हवा के दस हज़ार हिस्सों में कुल तीन से तीस तक। इससे अधिक यदि हुई तो वह हवा को अस्वच्छ कर देती हैं। कार्बन डाइ-आक्साइड की जिस हवा में भरमार हो वह हवा साँस लेने के योग्य नहीं रहती।

कार्बन डाइआक्साइड में यद्यपि साँस नहीं ले सकते, पर वह विषैली नहं । परन्तु कोयला खासकर कच्चा अर्थात् पत्थर का कोयला जलाने पर कार्बन-डाइ-आक्साइड तो बनती ही पर और भी कई गैसें निकलती हैं जिनमें से कुछ तो सचमुच ज़हरीली हैं। इनमें से एक

है कार्बन-मानाक्साइड। कहने को यह कार्बन-डाइ-

आक्साइड की छोटी बहिन है, परन्तु यह सचमुच विषैली, सख्त विषैली, है। तुमने सुना होगा कि कभी कभी जाड़ों में लोग बन्द कोठरी में कोयला जलाकर सो जाते हैं और सवेरे मरे हुए पाए जाते हैं। उनकी मृत्यु का कारण यही कार्बन मानाक्साइड होती है।

कार्बनडायाक्साइड की बहुतायत के अतिरिक्त, नालियों, टट्टियों, गंदगी के ढेरों, दलदलों, खड़े पानी, सड़ते हुए पौधों और जानवरों आदि से निकलती हुई गैसें भी वायु को अस्वच्छ करती हैं। कार्बन-मानाक्साइड में कोई बू नहीं आती, ये दोनों गैसें गंधहीन हैं।* परन्तु और दूसरी गैसें जिनका वर्णन किया है, उनमें बड़ी दुर्गन्ध आती है। तुम जानते हो कि ऐसी जगहों से जब गुज़रें जहाँ से दुर्गन्ध युक्त गैसें निकल रही हों, तो नाक पकड़ लेनी पड़ती है। यदि बहुत देर तक ऐसी जगहों में खड़े रहें अर्थात् ये गैसें साँस के साथ शरीर में जाती रहें, तो उलटियाँ होने लगती हैं, गला ख़राब हो जाता है, सिर दर्द होता है, यहाँ तक कि बुख़ार भी हो सकता है।

---

* विशुद्ध कार्बन डाइआक्साइड या मानाक्साइड गंधहीन हैं। परन्तु कोयला जलते समय अन्य गैसें भी निकलती हैं जो गंधयुक्त हैं। इसलिये लोग समझते हैं कि ये दो गैसें भी ख़ास कर कार्बन मानाक्साइड, गंधयुक्त हैं।

पहली प्रकार की अस्वच्छता, अर्थात् ठोस चीज़ों के

कण, यदि हवा में अधिक हों तो आँख खराब हो जाती हैं और फेफड़ों की बीमारियाँ होने का भय रहता है। अब इन गंदगियों को हवा से निकालने के उपाय सुनो। पहले तो पहली प्रकार की अस्वच्छताओं को लो। अनेक पदार्थों के जो छोटे कण हवा में होते हैं, वे अधिकतर हवा से भारी होते हैं और अपने बोझ के कारण ज़मीन पर बैठते रहते हैं। यदि कहीं से किसी तरह, और कण उड़कर न आवें तो थोड़ी देर में ये स्वयं बैठ जावेंगे और फिर ठीक तरह से झाड़ देने से या पानी द्वारा धोने से ये बिल्कुल अलग किये जा सकते हैं। या जब कभी पानी पड़े तब बरसता हुआ पानी इन कणों को अपने साथ लेकर गिरता है और हवा बिल्कुल साफ़ हो जाती है।

गैसों वाली गंदगी निकालने के भी दो तीन ढंग हैं। ये सब स्वाभाविक उपाय समझने चाहिएँ। अर्थात् प्रकृति में ही इनके निकालने के सामान हैं, जैसे कि पहली तरह की गंदगी प्रकृति मेंह बरसा कर साफ़ कर देती है।

सब गैसों में एक बड़ा भारी गुण है कि वे जहाँ भी हों, फैलकर सारी जगह को भर देती हैं, अर्थात् फैलने का गुण। तुम आगे चल कर पढ़ोगे और देखोगे कि कोई

गैसें दूसरियों से ज़्यादा भारी होती हैं। परन्तु भारी गैसों में भी चारों ओर, और इसलिये ऊपर उड़ने का गुण है

गैसों के इस फैल जाने वाले गुण के कारण गंदी गैसें हवा में फैलती रहती हैं और क्योंकि गंदी गैसें कहीं कहीं ही होती हैं और हवा सब जगह सैंकड़ों मील ऊपर तक चली गयी है, इसलिये ये गंदी गैसें सारी हवा में फैलकर मिल जाती हैं और इस तरह समझो कि लुप्त हो जाती हैं। इसलिए दुर्गन्धमय चीज़ों से थोड़ी ही दूर जाने पर दुर्गन्ध मालूम नहीं होती।

एक दूसरी तरह से भी गंदी गैसें लुप्त होती रहती हैं। तुम जानते हो कि हवा बिल्कुल स्थिर नहीं रहती, कुछ न कुछ, थोड़ी बहुत, चलती ही रहती है। वायु के इस संचार से भी गंदी गैसें चारों ओर हवा में फैलायी जाकर लुप्त हो जाती हैं। यदि हवा ज़ोर से चले तो इस तरह से सफ़ाई, समझाने की आवश्यकता नहीं, जल्दी ही हो जाती है। इसीलिए आँधी के बाद दुर्गन्धयुक्त गैसें लुप्त हो जाती हैं।

४—प्रकृति के सुप्रबन्ध

पिताजी ने कहना जारी रक्खा—देखो कि ये दोनों उपाय प्राकृतिक हैं, एक तो गैसों का फैल जाने वाला और दूसरा हवा के चलने का गुण। एक तीसरा प्राकृतिक उपाय है जिससे कि केवल एक गैस लुप्त होती रहती हैं। यह गैस है कार्बन–डाइ–आक्साइड।

तुम जानते हो कि सभी जीवधारी, क्या मनुष्य, क्या कीड़ा, क्या पौधा, साँस लेते रहते हैं और साँस से निकली हुई हवा में कार्बन–डाइ–आक्साइड की बहुतायत होती है। इसी प्रकार जब कभी भी लकड़ी, कोयला, तेल, आदि जलते हैं तब भी इस गैस का निर्माण होता है। सोच सकते हो कि यदि सब कार्बन–डायाक्साइड हवा में मिलती रहती तो कितना ही फैलना और चलना या बहना क्यों न होता, इस गैस की इतनी भरमार हो जाती कि हवा साँस लेने के योग्य न रहने पाती और इस पृथ्वी पर प्राणी जीवन कभी का समाप्त हो चुका होता।

परन्तु प्रकृति के कामों में ऐसी विषमता नहीं होती, जहाँ कार्बन डाइ–आक्साइड एक ओर तो स्वभावतः बढ़ती रही है, वहाँ दूसरी ओर, स्वभावतः वह कम भी होती रहती है, क्योंकि पौधों का मुख्य आहार यही

गैस अर्थात् कार्बन-डायोक्साइड है। हवा में जो थोड़ी सी कार्बन-डायाक्साइड है, वह हवा के साथ पौधों की पत्तियों के अन्दर जाती रहती है। पत्तियों में एक ऐसा गुण है कि दिन में, विशेषतः सूर्य के प्रकाश में वे इस कार्बन डाइ-आक्साइड से कार्बन नामक तत्त्व निकालकर अपना लेती हैं; आक्सिजन बाहर निकल आती है। इस तरह एक तो हवा में कार्बन डाइ-आक्साइड की अधिकता नहीं होती और दूसरे आक्सिजन की कमी नहीं होने पाती। प्रकृति के सुप्रबन्धों का यह एक बड़ा ही अच्छा दृष्टांत है।

चन्दा तुमने पूछा कि कार्बन डाइ-आक्साइड से कार्बन और आक्सिजन निकालने का क्या अर्थ है। इसका मतलब यह है कि कार्बन डाइ-आक्साइड दो चीज़ों से बनी है, कार्बन और आक्सिजन। आक्सिजन तो जानती ही हो कि गैस है। कार्बन, साधारण अवस्था में, एक काले रंग का ठोस पदार्थ है। लकड़ी के कोयले में लगभग निरा कार्बन ही होता है। पत्थर के, अर्थात् कच्चे कोयले में, लकड़ी में, हमारे तथा अन्य जीव-धारियों के शरीर का भी बहुत बड़ा हिस्सा कार्बन ही होता है। जैसा अभी बतलाया है, पौधों की हरी पत्तियों में यह गुण है कि सूर्य की रोशनी में कार्बन डायाक्साइड को तोड़कर उसके जनक पदार्थ अर्थात् कार्बन और

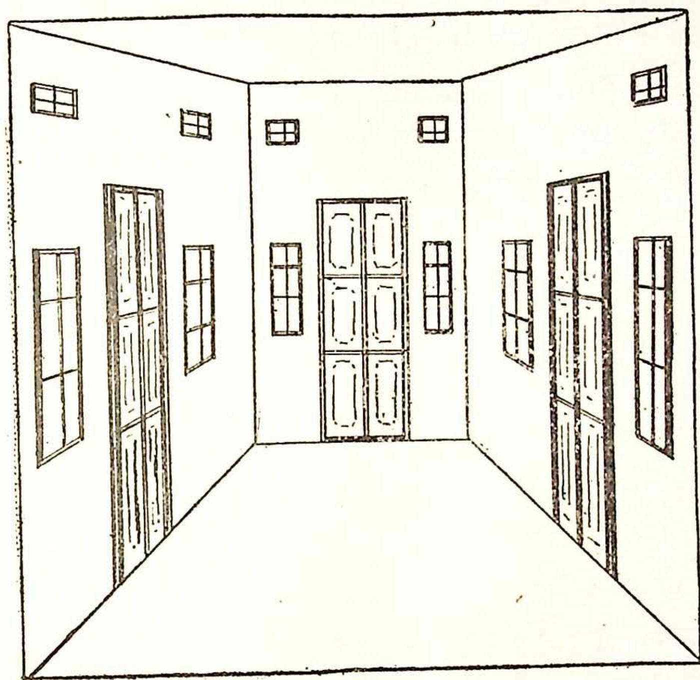
आक्सिजन निकाल लेती हैं। कार्बन तो अपने अर्थात् पौधे के काम के लिए अन्दर ही रख लेतीं हैं, और आक्सिजन बाहर निकल आती है।

चंदा—पिता जी, आपने हवा साफ करने की कई एक स्वाभाविक रीतियाँ बतलायीं। अब कृपा कर यह बतलाइये कि हम स्वयं घरों की हवा को कैसे साफ कर सकते हैं।

पिता जी—लो बेटा, सुनो। सबसे पहले तो हमें यह करना चाहिए कि जो कूड़ा-करकट, गंदगी, आदि हों वे घरों से दूर रक्खे जावें, ताकि उनसे निकली हुई गैसें घर तक पहुँच ही न सकें। दूसरे, घर इस तरह बनाने चाहिएँ कि खुली, साफ, हवा कमरों, कोठरियों के अन्दर आ सके और गंदी हवा बाहर जा सके।

इस तरह से बाहर की साफ हवा को भीतर और अन्दर की गंदी हवा को बाहर ले जाने की हवादारी, अंग्रेजी में, वेंटिलेशन, कहते हैं। ठीक तरह से हवादारी के लिए एक तो कमरों, कोठरियों में कई दरवाज़े—खिड़कियाँ होनी चाहिएँ; हो सके तो आमने-सामने की दीवारों में, पर आमने-सामने नहीं; और इनको अधिकतर खुला ही रखना चाहिए ताकि खुली हवा ठीक तरह से कोनों-कोनों में पहुँच सके। परन्तु सदा तो खिड़की—दरवाज़े खुले नहीं रह सकते। इसलिए खिड़की, दरवाजों

के अतिरिक्त कमरों, कोठरियों में दीवालों के ऊपरी हिस्सों में, छत के पास, रोशनदान या हवादान नाये जाते हैं जो इच्छानुसार खुले या अधखुले, कम खुले या बन्द रक्खे जा सकते हैं।



आकृति 9—हवादार कमरा

खुली हवा के आने के अतिरिक्त, हवादारी का काम प्रकृति के इस नियम के कारण होता है कि गरम हवा या गैस ठंडी से हलकी होती है और हलकी चीज़ भारी

के ऊपर जाती है। साँस से निकली हुई हवा, तुम जानते हो, कि गरम होती है। इसलिये साँस से निकली हुई गंदी, गरम हवा रहने के कमरे में ऊपर उठती है और रोशनदानों से निकल कर बाहर चली जाती है। उसकी जगह बाहर की ताज़ी, ठंढी हवा नीचे से भीतर आती है। सर्दियों और गर्मियों में जब खिड़की दरवाज़े ही नहीं, रोशनदान भी बन्द रखते हैं, तब साधारणतया कहीं न कहीं कोई छेद या सूराख ऊपर और नीचे रह ही जाते हैं जिनसे हवादारी का काम होता रहता है। जिन कमरों में अँगीठियाँ बनी होती हैं उनमें अँगीठी की चिमनी यह काम करती है, विशेषतः यदि अँगीठी में आग जल रही हो।

आजकल तो जो बड़े-बड़े नई प्रणाली के घर बनाये जाते हैं, उनमें इस हवादारी के लिए विशेष रूप से छेद, दराज़ बनाते हैं। बड़ी-बड़ी इमारतों में जहाँ बहुत से लोग एकसाथ बैठते हों, जैसे सिनेमा हाल आदि, उनके रोशनदानों में ऐसे बिजली के पंखे लगे होते हैं जो हाल की गंदी हवा ऊपर खींच कर बाहर फेंक देते हैं। कभी कभी कमरों की हवा साफ करने के लिये चूना और कोयला डाल देते हैं। ये चीज़ें गैसों, विशेषतः गंदी गैसों को चूस लेती हैं। अस्पतालों में रोगियों के कमरों में बहुधा इनको व्यवहार में लाया जाता है।

9—जल के प्राप्ति-स्थान और उपयोग

देखो चंदा, आकाश में कैसी काली घटा छा रही है। जान पड़ता है कि वर्षा होगी। यह देखो बूंदा-बांदी भी शुरू हो गयी। आ हा! यह तो मूसलाधार वर्षा होने लगी है।

इतने में पिताजी भी वहाँ आ गये। रवि को चंदा से ये बातें करते हुए और बाहर खड़े देख कर, पिता जी ने कहा, "बेटा रवि, वर्षा में मत खड़े रहो। देखो कपड़े भीग गये। जाओ, भीगे कपड़े जल्दी बदलो और सूखे कपड़े पहन कर आओ।"

कपड़े बदल कर रवि पिताजी के पास आया। चंदा भी वहीं थी। पिता जी ने उनसे पूछा, "बच्चो, क्या तुम बता सकते हो कि वर्षा में ऊपर आकाश से धरती पर क्या गिरता है?" रवि और चंदा ने कहा कि पानी। साथ ही रवि ने पूछा, "परन्तु पिता जी यह तो बतलाइये कि वर्षा के अतिरिक्त और कैसे हमें पानी मिल सकता है।" चंदा बोल उठी, "वाह! यह तो मैं ही बतला सकती हूँ। पानी हमें वर्षा के अतिरिक्त झरनों, सोतों, नदियों, कूओं, तालाबों, नहरों और झीलों से। मिलता है। इनके अतिरिक्त समुद्रों में भी तो पानी ही पानी है"

रवि—मैंने तो सुना है कि समुद्र का पानी खारा होता है। और इसलिये पीने के योग्य नहीं होता। अच्छा, पिता जी आप बताइये कि सबसे साफ पानी कौन सा होता है।"

पिता जी—सबसे साफ़ तो पानी वर्षा का ही होता है। साफ़ ही नहीं, सबसे विशुद्ध पानी जो कि हमें स्वाभाविक रूप में मिल सकता है वह वर्षा का पानी है। पर इसके अतिरिक्त सो अर्थात् चश्मों का पानी भी साफ होता है और गहरे कूओं तथा नलों से भी बिल्कुल साफ पानी मिलता है।

चंदा बोल उठी, "हाँ तो अब समझे कि इसलिए पिछले साल जब हम लोग कश्मीर गये थे, तब माताजी इतनी बड़ी नदी छोड़ कर पीने का पानी एक चश्मे से मँगवाया करती थीं।"

रवि—"पिताजी पीने के अतिरिक्त पानी और भी किसी काम का होता है?" पिता जी "हाँ, बेटा! पानी भी, वायु की तरह, सब जीवधारियों के लिए, अति आवश्यक है सम्भवतः तुम को यह जान कर अचम्भा होगा कि हमारे शरीर का कोई दो तिहाई हिस्सा पानी है। पानी हमारे आहार का एक अंश है; और शेष खुराक को पचाता भी है।

वर्षा बन्द हो गयी थी और उमस के कारण चंदा

के मुँह पर पसीना आ गया था। पसीने की ओर संकेत करके पिता जी ने कहा—हमारे शरीर में जो मल पदार्थ; गंदे माद्दे हैं वे पानी में घुल कर बाहर निकलते हैं, एक तो पसीने के रूप में, दूसरे पेशाब बन कर और तीसरे साँस की भाप के रूप में। पसीना उड़ने से शरीर ठंढा होता है। इस प्रकार पानी हमारे शरीर को ठंढा रखता है—अधिक गरम नहीं होने देता।

रवि—पिता जी, नहाने धोने से भी तो पानी शरीर को ठंढा करता है। और शरीर धोने के अतिरिक्त कपड़े धोने तथा पकाने में भी तो काम आता है।

पिता जी—हाँ बेटा! और पानी जितना हमारे लिए आवश्यक है उतना ही गाय, बैल, भैंस, घोड़े, कुत्ते ही नहीं और सब जानवरों के लिए तथा बेल, बूटों, पेड़ों, खेतों अर्थात् पौधिक संसार के जीवों के लिए भी अति आवश्यक है। तुम जानते हो न कि जिस साल वर्षा नहीं होती उस साल अकाल या दुर्भिक्ष पड़ जाता है, अर्थात् अनाज ठीक तरह से पैदा नहीं होता और अनाज की कमी से लोग भूखों मरने लगते हैं।

चंदा ने पूछा—"पिता जी, क्या खेतों के लिए पानी प्राप्त करने का उपाय वर्षा को छोड़ कर और कोई नहीं?" पिता जी ने उत्तर दिया—"नहीं बेटी, और भी बहुत से उपाय हैं, जो मैं तुम्हें अभी बतलाता हूँ।"

और पिताजी ने कहना जारी रखा।

सैर करते समय कभी-कभी हम लोग खेतों के पास से जाते हैं। तब तुमने देखा होगा कि खेतों के बीच में प्रायः कुएँ होते हैं, जिनमें अरहट (रहट) लगे होते हैं, जिनको दो बैल चलाते हैं और पानी के डोल (टिंडे) भर भर कर ऊपर आते हैं। लकड़ी की नाली में अपना पानी डाल कर टिंडे फिर कुएँ में चले जाते हैं। यह पानी नालियों में से होता हुआ खेतों में जाता है और लगी हुई खेती को सींचता है जिससे तरह-तरह के अनाज और सब्ज़ियाँ निकलती हैं।

रवि--हाँ पिता जी, मैंने एक बार रहट की गद्दी (गाधी) पर बैठ कर बैलों को हाँका था। गोल-गोल चक्कर काटने से खूब आनन्द आया था।

पिता जी—खेतों को पानी देने के लिए एक तो कुआँ हुआ और दूसरा सुनो।

———

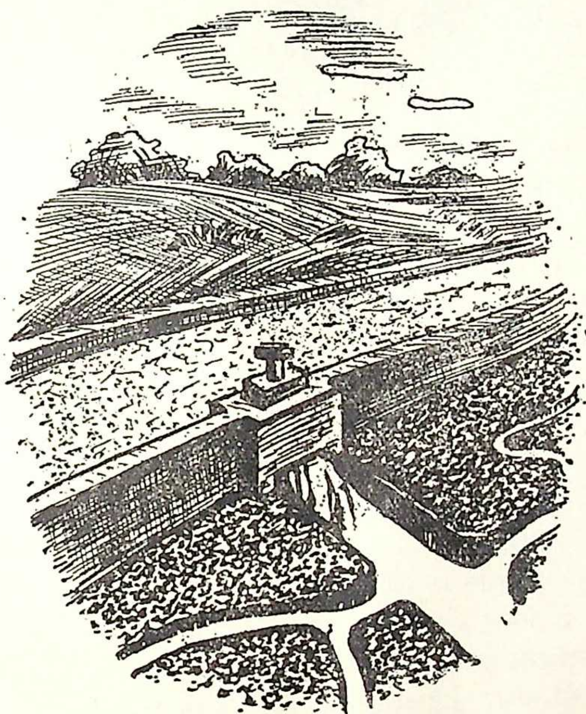
10—जल के व्यावसायिक उपयोग

पिता जी—तुम्हें याद है न कि एक दिन सैर करने के लिए नहर पर गये थे जो यहाँ से डेढ़ दो मील है?

चंदा—हाँ पिता जी, नहर खूब भरी हुई चल रही थी और उसके बायें किनारे पर एक पुल जैसा बना हुआ था,

जिस पर लोहे का एक छोटा सा खम्भा लगा था और पुल के नीचे से पानी खूब ज़ोर से एक नाले में गिर रहा था।

पिता जी—बिल्कुल ठीक। वह नाला खेतों के बीच से होकर जाता है और किसान उससे पानी लेकर खेतों को सींचते हैं।



आकृति 11—नहर के पानी को खेतों में ले जाने की विधि

रवि—पिताजी ! नहर पर एक पनचक्की भी तो चल रही थी, जिससे आटा पिस रहा था। वह कैसे ?



आकृति 12—पन पहिया✲

✲ शिक्षक के प्रति—स्वयं पन-पहिया कैसे चलता है, यह तो आकृति से साफ़ प्रकट है। पहिये के फलों पर पानी की धारा ऊपर से पड़ती है और पहिया घूमने लगता है। (जितने ऊँचे से और जितना अधिक पानी पड़ेगा उतने ही ज़ोर से पहिय घूमेगा।) आकृति में पहिया-घटिकाप्रतिकूल अर्थात घड़ी की सूई की चाल के विरुद्ध दिशा में घूमेगा। पन-पहिया चक्की का पाट कैसे चलाता है यह कदाचित् उतना स्पष्ट नहीं, पर इसको बतलाने की अभी कोई आवश्यकता भी नहीं। हाँ, यदि कोई बालक बालिका जानना ही चाहे तो ज़रूर समझा दीजिए।

देखिए कि दो बार मुड़ी हुई एक शलाका के द्वारा पन-

पिता जी—हाँ, बेटा ! चक्की का एक पहिये से सम्बन्ध होता है जो पानी के गिरने से चलने लगता है। जिससे चक्की का पाट घूमने लगता है। इस पाट पर दूसरा पाट सधाया होता है। दोनों के बीच में डाला हुआ अनाज इस तरह पिस कर आटा बन जाता है।

चन्दा—चलो पिता जी ! आज नदी की सैर को चलें। आज तो रक्षाबंधन, (रखड़ी)का दिन है और स्कूल में छुट्टी है।

पहिये का संबंध दाहिनी ओर दिखलाये हुए छोटे पहिये से है। शलाका का एक सिरा पन-पहिये पर जड़ा हुआ है, दूसरा छोटे पहिये पर; परंतु पहियों की धुरी अर्थात् केन्द्र पर नहीं किंतु ज़रा एक तरफ़। पन-पहिये के घूमने पर शलाका का इधर वाला सिरा भी एक छोटे से वृत्त में घूमेगा, जिसके कारण शलाका का लंबा भाग तो ऊपर नीचे होते हुए इधर-उधर चलने लगेगा। पर उसका दूसरा सिरा एक वृत्त में घूमेगा और छोटे पहिये को घुमाने लगेगा। यह पहिया पट्टी द्वारा चक्की के पाट (या किसी अन्य कल के पहिये) को घुमाता है।

ठीक तरह से समझाने के लिये सबसे अच्छा तरीका तो यही होगा कि यदि पास में कहीं पनचक्की हो तो बच्चों को वहाँ ले जाकर ये सब बातें दिखलाकर समझाइए। परंतु एक बात का ध्यान रखिए, पन-पहिये और दूसरे पहिये का संबंध अन्य प्रकार भी किया जा सकता है। यहाँ आकृति में दिखलाये संबंध का ही विवरण दिया गया है।

※पट्टी का छोटे पहिये के पास का ऊपरी हिस्सा आकृति में साफ़ दीख पड़ता है।

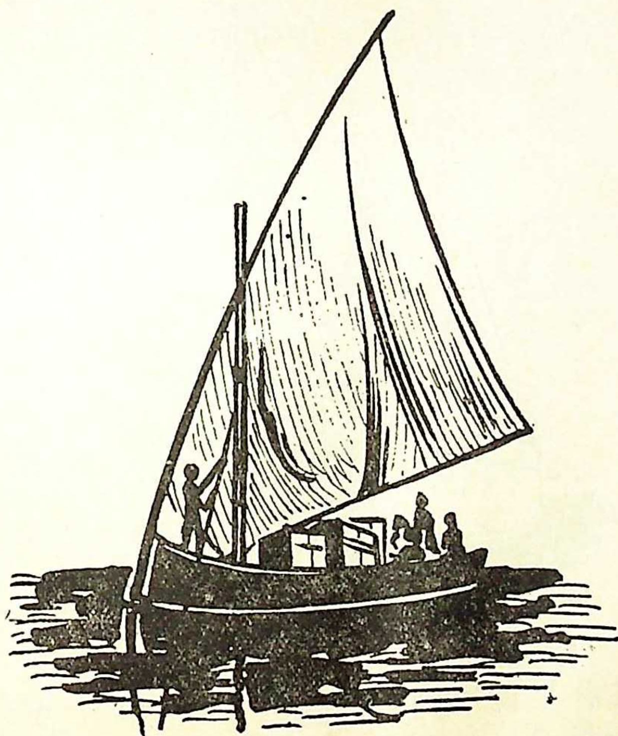
पिता जी—चलो देखो ! मुझे भी आज कोई विशेष कार्य नहीं । अपनी माता जी को भी साथ ले चलो ।

टाँगे पर बैठ कर चारों नदी पर पहुँचे । नदी खूब चढ़ी हुई थी । उस में बड़े-बड़े मोटे लट्ठे, शहतीर आदि बहते हुए आ रहे थे । रवि ने पूछा—"पिता जी लकड़ियाँ कहाँ से आ रही हैं ?" पिताजी ने जवाब दिया—

"यह नदी बहुत दूर से, ऊँचे पहाड़ों में से आती है । वहाँ इसके किनारों पर बड़े-बड़े घने जंगल होते हैं, जिनमें देवदार (दयार) चीड़, कैल आदि के पेड़ होते हैं । ये पेड़ बहुत ही बड़े, खूब लकड़ी वाले होते हैं । वहाँ के

आकृति 13—1. देवदार, 2. कैल, 3. चीड़ के वृक्ष

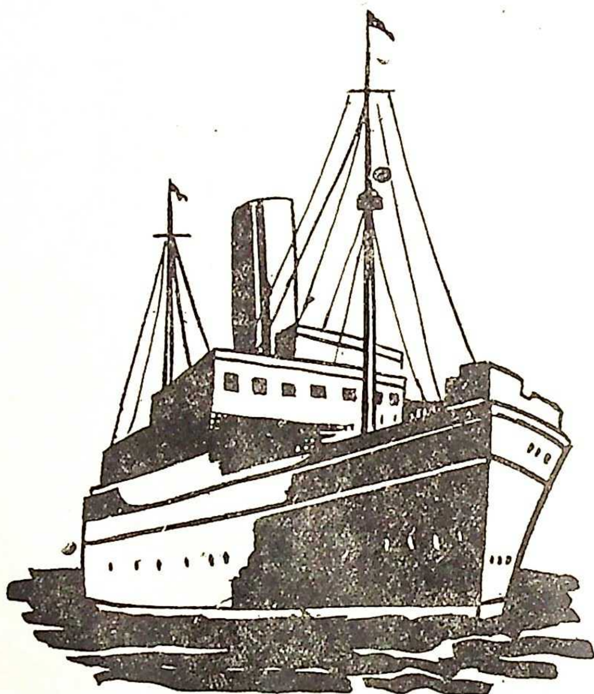
लोग इन वृक्षों की लकडी को काट कर नदी में बहा देते हैं। नदी में बहते हुए ये लट्ठ, शहतीर, आदि मैदानों में पहुँचते हैं, जहाँ सब लकड़ी निकाल ली जाती है और तरह-तरह के काम में लायी जाती है। अन्य किसी प्रकार ले जाने का खर्च लकड़ियों के मूल्य से भी अधिक हो जाता है।



आकृति 14—यात्रियों और सामान से लदी नाव

इतने में रवि बोल उठा, "माता जी, वह देखो एक

बड़ी सी नाव आ रही है, उसमें बहुत से लोग बैठे हैं और कुछ सामान भी लदा हुआ है।" "हाँ बेटा, नावों के द्वारा प्रायः लोग किसी नदी के पास की एक बस्ती से दूसरी बस्ती को आते जाते रहते हैं। और तुमने यह तो



आकृति 15—समुद्र-यात्रा के लिये जहाज़

सुना ही है कि जहाज़ों पर सवार होकर समुद्रों को पार दूर देशों में जाते हैं। दूर देशों से बहुत सा विदेशी

माल भी हमारे देश में जहाज़ों के द्वारा समुद्र पार करके

आता है।

शाम को जब सब घर वापस पहुँच गये तब पिताजी ने कहा—"आओ बच्चो, तुम्हें पानी के अभी कुछ और उपयोग बतलाएँ।" रवि, ज़रा पंजाब का नकशा तो उठा लाओ। "रवि से नकशा लेकर पिता जी ने कहा—"बेटा, बताओ तो जोगिन्दर नगर कहाँ है?" रवि ने झट जोगिन्दर नगर पर अपनी उँगली रख दी। पिताजी ने कहा—"यहाँ पर एक बड़ा भारी बिजली घर है, जहाँ पानी से बिजली निकलवाते हैं, जो दूर-दूर तक पहुँचायी जाती है और जिससे हमारे तरह-तरह के घरेलू तथा व्यवसायिक कार्य चलते हैं।

रवि—रेल का इंजन भी तो पानी से चलता है।

पिता जी—हाँ बेटा! इंजन में पानी को कोयले की आग से गरम करके बहुत सी भाफ बनाते हैं। इस भाफ के बल से इंजन के पहिये चलवाये जाते हैं। इंजन के घूमते पहियों से सिर्फ बड़ी-बड़ी रेलगाड़ियां ही नहीं खिंचवाते, अपितु और भी तरह-तरह की कलों के पुरजे चलवाते हैं।

११—जल की अस्वच्छताएँ

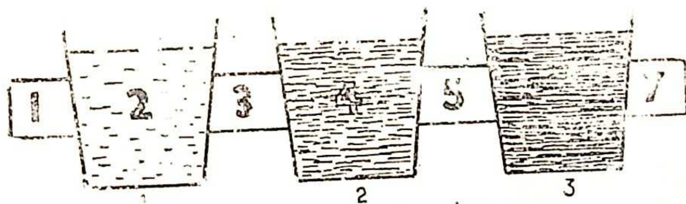
पिता जी—कल हम लोगों ने तुम्हें जल के प्राप्ति स्थान बतलाए थे कि कहाँ-कहाँ से पानी मिलता है। जल के कुछ उपयोग भी बतलाये थे कि पानी से क्या क्या काम लिये जाते हैं। आज सुनो कि उसी पानी से उसकी अस्वच्छता, और गंदगी के कारण बहुत सी बीमारियाँ भी फैलती हैं। और यह भी सुनो कि जल की ये अस्वच्छताएँ दूर कैसे की जा सकती हैं, ताकि इन बीमारियों से हम बच कर रह सकें।

पानी में दो तरह की गन्दगियाँ होती हैं—एक तो पानी में घुल जाती है, जिन्हें देख नहीं सकते, क्योंकि घुली हुई चीज़ों से, हो सकता है कि पानी में रंग आ जाय परन्तु जो चीज़ घुल गयी है वह दिखलायी नहीं पड़ती। ऐसी चीज़ों को घुलनशील अर्थात् घुलने वाली कहते हैं। तरह-तरह के नमक, रंग, गैसें, ये सब पानी में घुलनशील हैं। इनके कारण पानी गन्दा दिखलायी नहीं देता। इसलिये इनको गन्दगी कहना शायद मन में खटकता हो। परन्तु इनके कारण पानी की विशुद्धता जाती रहती है। वह शुद्ध जल नहीं रह जाता। पानी के विचार से ये गन्दगियाँ ही हैं।

दूसरी तरह की गन्दगियाँ पानी में घुल नहीं जातीं,

केवल तैरती या लटकती हुई रहती हैं। इनको साफ देख

सकते हैं और इनके कारण पानी अस्वच्छ अर्थात् गन्दा दिखलायी भी पड़ता है। तुम जानते हो कि शुद्ध जल में यह गुण है कि प्रकाश उससे नहीं रुकता। साफ पानी से भरे गिलास के दूसरी ओर रक्खी हुई चीज़ें देखी जा सकती हैं। घुली हुई चीजों के कारण पानी के इस गुण में कुछ कमी नहीं होती। हाँ, यदि घुली हुई चीज़ों से पानी में रंग आ जाय तो चीजें रंगीन अवश्य दिखाई देने लगेंगी। तैरती या लटकती हुई चीज़ें पानी का यह गुण हर लेती हैं। जिस पानी में इस प्रकार की लटकती हुई चीजें हो वह पानी पारदर्शक नहीं रहता। पारदर्शक के अर्थ हैं आर-पार दिखलाने वाला। पानी में तैरने या लटकने वाली गन्दगियाँ हैं—मिट्टी, तिनके, बाल गोबर आदि।



आकृति 11—पानी पारदर्शकता

1. स्वच्छ जल, 2. रंगीन पानी, 3. मटीला पानी।

दूसरी तरह की अर्थात् तैरने या लटकने वाली चीजों को मिश्रित (मिली हुई) कह सकते हैं। ये चीज़ें पानी

से सुगतमा से निकाली जा सकती हैं। थोड़ी देर पानी को बिना हिलाए-डुलाए रखने से ये मिली हुई चीजें या तो नीचे बैठ जायेंगी या उतराने लगेंगी। ऐसी चीजें छान कर भी निकाली जा सकती हैं। छानने के लिए कई चीजें काम में लायी जा सकती हैं—मिली हुई चीजों की मोटाई और पतलेपन के अनुसार। जैसे साधारण तारों की छन्नी, मोटा कपड़ा, महीन कपड़ा, रुई, ब्लाटिंग पेपर अर्थात् सोखता कागज़। घुली हुई चीजें इन रीतियों से नहीं निकाली जा सकतीं, परन्तु निकाली वे भी जा सकती हैं और विशुद्ध पानी प्राप्त किया जा सकता है।

जो लोग नदियों या नहरों के पास रहते हैं और उनके पानी को, पीने या धोने के लिए काम में लाते हैं, वे उसको नदी से लाकर कुछ देर पड़ा रखने के बाद काम में लाते हैं। पीने के लिए, फिल्टर करने के बाद ऐसे पानी को काम में लाना चाहिये।

चंदा—पिता जी, फिल्टर क्या होता है और कैसे किया जाता है।

पिताजी—छानने को अंग्रेजी में फिल्टर कहते हैं। फिल्टर करने, अर्थात् छानने की कई विधियाँ हैं। एक तो स्वाभाविक, जिससे प्रकृति स्वयं पानी को साफ़ कर देती है और दूसरे कृत्रिम अर्थात् मनुष्य द्वारा किये हुए

उपाय । वास्तव में ये उपाय प्रकृति के अनुकरण-मात्र ही है।

रवि—स्वाभाविक और कृत्रिम, ये तो मेरी समझ से बाहर हैं !

पिता जी—अभी समझ जाओगे। पहले यह बतलाते हैं कि स्वाभाविक, विधियाँ क्या हैं, अर्थात् प्रकृति कैसे पानी को छान कर स्वच्छ बनाती है। जब मेंह बरसता है तब पानी ज़मीन पर गिर कर गंदा हो जाता है परन्तु धीरे-धीरे पानी धरती में समा जाता है और उसकी सारी गंदगी धरती में अटक जाती है। इस प्रकार स्वच्छ जल, साफ पानी, ज़मीन की निचली तहों में इकट्ठा हो जाता है, जहाँ से कुएँ खोद कर इसे निकालते हैं या सोते अर्थात् चश्मे बन कर बहने लगता है।

चंदा—मट्टी से तो पानी गंदा हो जाता है और अब आप कहते हैं कि मट्टी ही उसे छान कर साफ़ भी बना देती है।

पिता जी—हाँ बेटी ! यदि मट्टी बहुत महीन हुई तब तो वह पानी में लटक कर उसको गंदला बना देगी परन्तु यदि मट्टी ज़रा मोटी हुई तो वह पानी में मिलेगी नहीं, अपितु मिली हुई मट्टी के छोटे-छोटे कणों को अपने से मिला कर पानी को उन से मुक्त कर देगी और पानी साफ़ हो जायेगा।

चंदा—मेरी तो समझ में अभी भी नहीं आया।

पिता जी—अच्छा, अभी समझ में आ जावेगा, जब बतलायेंगे कि वह दूसरी, कृत्रिम विधि क्या है; अर्थात् हम स्वयं किस प्रकार पानी को छान कर साफ़ करते हैं।

रवि—छानने की तो बहुत सी विधियाँ आप अभी बतला चुके हैं।

पिता जी—यदि थोड़ा सा पानी साफ़ करना हो तब तो वे उपाय काम में लाये जा सकते हैं। परन्तु जब बहुत अधिक पानी साफ़ करना हो, तालाब के तालाब, तब उन विधियों से काम नहीं चल सकता।

12—जल शोधन-विधि

चंदा—पिताजी, जो पानी नलों में आता है, वह तो बड़ा साफ़ होता है। क्या यह भी इन कृत्रिम विधियों से साफ़ किया होता है या वह सब कूओं से आता है।

पिताजी—बेटी! कई जगहों में तो नलों का पानी धरती तल से दो तीन सौ फुट गहरे कूओं से आता है, परन्तु जहाँ कहीं नदी, नाले नगर के पास हों, वहाँ इन्हीं का पानी कृत्रिम विधियों से फिल्टर करके नलों में भेजा

जाता है।

रवि—वह कैसे ?

पिता जी—नदी या नालों का पानी बड़े-बड़े नलों से लाकर एक विशेष रूप से बनाये हुए तालाब में भर देते हैं। यहाँ पर पानी के खड़ा रहने के कारण उसमें मिली हुई (अर्थात् तैरने वाली या लटकी हुई) गंदगी नीचे बैठ जाती है, धूप लगने से भी पानी की एक तीसरी तरह की गंदगी भी कम हो जाती है।

रवि—तीसरी तरह की गंदगी ! अभी तो आपने कहा था कि गंदगी दो तरह की होती है, घुली हुई या मिली हुई। यह तीसरी तरह की गंदगी कहाँ से कूद पड़ी ?

पिता जी—बेटा, एक तीसरी तरह की गंदगी भी होती है, जो बड़ी हानिकर है। बीमारियाँ इसी से फैलती हैं। इसकी बातें अभी थोड़ी देर में बतलावेंगे। पहले यह सुनो कि नदी-नालों का पानी कैसे साफ़ करके पीने योग्य बनाया जाता है।

पहले तालाब में थोड़ी देर ठहरने के बाद पानी में लटकी हुई चीज़ों के मोटे-मोटे कण तो नीचे बैठ जाते हैं पर जो कण ज़रा छोटे होते हैं वे अभी भी लटके हुए ही रहते हैं। इनको भी निकालने के लिए पहले तालाब से पानी नलों द्वारा एक दूसरे तालाब में ले जाया जाता

है। यह तालाब ज़रा ऊँचाई पर होता है। इसके तले पर

सब से नीचे तो सिमेंट या कंकड़ के छोटे-छोटे टुकड़ों की एक तह होती है। इसके ऊपर पत्थर या कोयले के छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं और इस के भी ऊपर रेत की एक तह। इस दूसरे तालाब के तले से पानी एक तीसरे तालाब में नलों द्वारा ले जाया जाता है। दूसरे तालाब के बिल्कुल तले जो पानी होता है, वह इन तीनों तहों से छन कर पहुँचता है। ये तहें पानी की रही सही गंदगी ठीक तरह से साफ़ कर देती हैं और इसलिए जो जल तीसरे तालाब में पहुँचता है वह बिल्कुल स्वच्छ होता है; और नलों के द्वारा नगर में घर-घर पहुँचाया जाता है।

जो पानी धरती के नीचे इकट्ठा होता है वह भी इसी तरह से साफ़ होता है, क्योंकि धरती की सतह और नीचे जहाँ पानी इकट्ठा होता है, इन दोनों जगहों के बीच निरी मट्टी ही नहीं होती, अपितु कंकड़, छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़े, रेत, सभी चीज़ों की मोटी-मोटी परतें होती हैं जिनके बीच में से होकर गुज़रने से पानी बिल्कुल साफ़ हो जाता है।

इस तरह से पानी में मिली हुई चीज़ें निकल जाती हैं और पानी स्वच्छ, पारदर्शक हो जाता है। परन्तु घुली हुई चीज़ें इस तरह से नहीं निकाली जा सकतीं। उनको निकालने के लिए और ही यत्न करने पड़ते हैं। परन्तु

प्रायः ये घुली हुई चीज़ें लाभकारी होती हैं और उनको न निकलना ही ठीक है। हाँ, कभी कभी ये घुली हुई चीजें स्वास्थ्य के लिए हानिकर भी होती हैं। ऐसा पानी पीना ही न चाहिए।

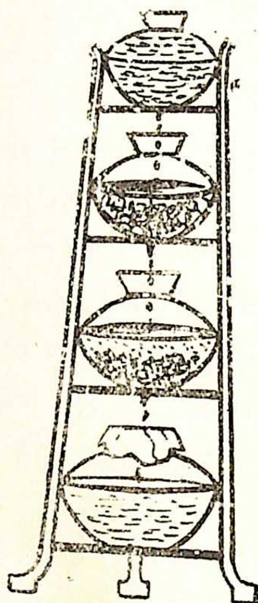
चंदा—पिता जी ? कभी-कभी नल के पानी से विचित्र गन्ध सी आती है। वह क्यों ?

पिता जी—बेटी, पानी में एक दवाई सी डाल देते हैं, जिसका नाम क्लोरीन है और जिसमें वह बू होती है। इससे उपर्युक्त तीसरी तरह की गंदगी निकल जाती है। कभी-कभी पानी में चूना या पोटेशियम परमैंगनेट डाल कर तीसरी तरह की गंदगी निकालते हैं। पोटेशियम परमैंगनेट भी एक तरह की दवाई समझनी चाहिए। पानी में घोलने से पानी लाल या गुलाबी रंग का हो जाता है। इसलिए साधारण लोग इसको लाल दवाई के नाम से जानते हैं। तुमने देखा होगा कि बाज़ार से जो फल और सब्ज़ी घर में आती हैं, माता जी पहले उसको इसी लाल दवाई में थोड़ी देर भिगो कर, फिर साफ़ पानी से धोकर तब खाने के लिये काम में लाती हैं, क्योंकि प्रायः फलों और सब्जियों के ऊपर भी तीसरी प्रकार की गंदगी होती है। वह सब लाल दवाई निकाल देती है। यही नहीं, कभी-कभी इन चीज़ों में छोटे-छोटे कीड़े भी होते हैं, उन सब को यह लाल

दवाई मार डालती है। मरने पर ये कीड़े पानी में उतरने

लगते हैं और निकाल डाले जाते हैं।

सबसे सुगम ढंग पानी साफ़ करने का यह है कि जब पानी गंदला हो तो उस में थोड़ी सी फिटकिरी घोल दो। सारी मैल मानो फट कर थोड़ी ही देर में बैठ जावेगी



आकृति 17 घरेलू फिल्टर।

और पानी बिल्कुल साफ़ हो जावेगा। जहाँ फिल्टर के तालाब न हों वहाँ एक छोटा सा घरेलू फिल्टर भी बन सकता है। पूछो अपनी माता जी से कि कैसे।

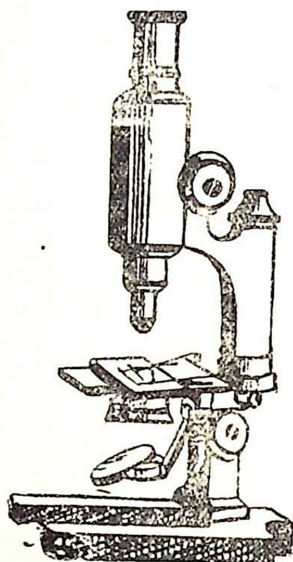
माता जी—चार घड़े लो और उनको एक तिमंजिली घड़ौंची पर एक दूसरे के नीचे रखदो। ऊपर के तीन घड़ों के पेंदों में एक एक छेद कर दो। सब से ऊपर के घड़े के छेद में एक साफ कपड़े का टुकड़ा मरोड़ कर घुसेड़ दो और पानी से भर दो ताकि बूँद-बूँद पानी टपक सके। दूसरे घड़े को आधे के करीब लकड़ी के कोयले के छोटे छोटे टुकड़ों से भर दो और तीसरे को रेत से। सब से निचले घड़े के पेंदे में कोई छेद नहीं होना चाहिए परन्तु उसका मुँह कपड़े के टुकड़े से ढक दो। पहले घड़े का पानी धीरे-धीरे टपक कर दूसरे और तीसरे घड़े के कोयले और रेत में छनता हुआ सबसे निचले, चौथे घड़े में उसके ऊपर रखे हुए कपड़े से छन कर पहुँचेगा और बिल्कुल साफ होगा।

13—जीवाणु और रोगाणु

माता जी—तुम लोगों से बता चुके हैं कि पानी में एक तीसरी तरह की गंदगी भी हो सकती है। वास्तव में पानी में ही नहीं, हवा में भी यह तीसरी प्रकार की अस्वच्छता हो सकती है। तुमने बीमारी के जर्मों का नाम सुना होगा। जर्म अंग्रेजी का शब्द है। अपनी भाषा में इनको रोगाणु कह सकते हैं। अणु के अर्थ हैं बहुत ही

छोटी चीज़। हवा और पानी में रोगाणु तीसरी प्रकार की गन्दगी हैं।

शुरू शुरू में जब इनका पता चला था, तब लोग समझते थे कि ये बहुत ही छोटे-छोटे कीड़े हैं। इसीलिये कहीं कहीं अभी भी इनको कीटाणु कहते हैं। परन्तु वास्तव



आकृति 18 सूक्ष्म दर्शक यंत्र।

में कीड़े नहीं किन्तु बहुत ही छोटे-छोटे पौधे, अर्थात् वनस्पति या पौधिक संसार के अति सूक्ष्म जीव हैं।

ये इतने छोटे होते हैं कि खाली आँख से क्या, बड़ा कर दिखलाने वाले लेंसों की सहायता से भी नहीं

देखे जा सकते । इनको देखने के लिए आवश्यक है कि हज़ार डेढ़ हज़ार गुना बड़े करके देखे जायें । सूक्ष्म अर्थात् बहुत छोटी चीज़ों को इतना अधिक बड़ा करके दिखलाने वाले ऐसे यंत्रों को सूक्ष्म—दर्शक या खुर्दबीन, अंग्रेजी में माइक्रास्कोप कहते हैं । संस्कृत के सूक्ष्म, अरबी के खुर्द और यूनानी भाषा के माइक्रस शब्दों के एक ही अर्थ हैं—बहुत छोटी चीज़ । इसी तरह, दर्शक, बीन, और स्कोप के भी एक ही अर्थ हैं—दिखलाने वाला ।

तरह-तरह की बीमारियों के रोगाणु भी तरह तरह के होते हैं । इस बात में अधिक खोज-खाज से पता चला है कि इस तरह के अणु केवल रोगकारक ही नहीं होते अपितु बहुत से लाभकारी भी होते हैं । दूध से जो दही बनता है वह इस प्रकार के लाभकारी अणुओं की कृपा से होता है । इसी तरह से मैले से खाद भी इन लाभकारी अणुओं द्वारा ही बनती हैं । सब तरह के इन अणुओं को अंग्रेजी में बैक्टीरिया कहते हैं । अपनी भाषा में इनको जीवाणु कह सकते हैं ।

अच्छी तरह से समझ लो कि जो ये बहुत ही छोटे छोटे पौधे हैं वे सब जीवाणु कहलाते हैं, चाहे लाभकारी हों या हानिकारक । इनमें से जो रोगकारक हैं उन्हीं को रोगाणु कहते हैं ।

ये जीवाणु हवा के साथ इधर-उधर बहते रहते हैं

और चीज़ों पर लग कर ठहर जाते हैं। हवा में रहते-रहते ये रोगाणु साँस के साथ हमारे शरीर के अन्दर खून में जा पहुँचते हैं। खाने-पीने की चीज़ों में भी इन रोगाणुओं की छूत लग जाती हैं, और इस तरह भी पेट में से होकर खून में पहुँच जाते हैं। यदि शरीर की खाल कहीं से छिली या कटी हुई हो और रोगाणु वहाँ पहुँच गये, तब तो सीधे खून में जा पहुँचते हैं। यदि खून कमज़ोर हुआ तो इन तीनों रीतियों में से किसी रीति से भी पहुँचे हुए रोगाणु खून में अपना अड्डा जमा लेते हैं और तरह-तरह के रोग पैदा करते हैं।

रोगाणुओं से बचे रहने के केवल दो ही उपाय हैं। एक तो यह कि खून में इतनी शक्ति हो कि रोगाणु वहाँ पहुँच कर भी डेरा न जमा सकें, अर्थात् स्वास्थ्य बिल्कुल अच्छा हो। ठीक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है कि आहार ठीक हो, न बहुत अधिक, न बहुत कम। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य के लिए यह भी आवश्यक है कि कुछ न कुछ व्यायाम प्रतिदिन किया जाय, खुली हवा में, जैसे खेलना, कूदना, पैदल चलना, आदि।

दूसरी रीति इन रोगाणुओं से बचने की यह है की ये पास ही न पहुँचने पावें। हवा को रोगाणुओं की गंदगी से मुक्त करने के लिए एक तो काफ़ी उजाला हो, हो सके तो धूप भी पहुँचनी चाहिए और खुली हवा होनी

चाहिए। कई एक ऐसी जर्म-नाशक दवाइयां भी हैं, जिन के छिड़कने से रोगाणु मर जाते हैं।

पानी में रोगाणुओं की गंदगी कई प्रकार से पहुँचती है। हो सकता है कि पानी किसी तरह से ऐसी चीजों से छू गया हो, जिनमें रोगाणु विद्यमान हों।

दूध में इन दोनों प्रकारों के अतिरिक्त तीसरी प्रकार से भी रोगाणु हो सकते हैं। गाय-भैंस आदि स्वयं ऐसी बीमारियों से पीड़ित हो सकती हैं जिनके जर्म दूध में पहुँच जाते हैं।

पानी और दूध से रोगाणुओं की गंदगी निकालने की केवल एक ही विधि है। उनको अच्छी तरह से उबाल कर पीना चाहिए। उबलते हुए पानी और दूध का टैंपरेचर इतना होता है कि उसमें सब जीवाणु मर जाते हैं। उबालने के बाद दूध या पानी ढक कर ऐसी जगह रखना चाहिए जहाँ कि मक्खियाँ न पहुँच सकें।

14—खुराक के अंश—1

चंदा ने पूछा—"पिता जी हमें खुराक क्यों खानी चाहिए? खाना खाने की आवश्यकता क्यों होती है?"

रवि बोल उठा, "वाह यह कोई पूछने की बात है? हम खाना इसलिए खाते हैं कि हमें भूख लगती है।"

पिता जी—सुनो बच्चो, मनुष्य के पालन-पोषण के लिए, उसको भला-चंगा और काम-धंधा करने के योग्य रखने के लिए, खुराक, अर्थात् खाना खाने की बड़ी आवश्यकता है। परन्तु इससे पहिले कि तुम्हें खोलकर बतलावें कि खुराक यह सब कैसे करती है, तुम्हें जानना चाहिए कि खुराक किन-किन चीजों की बनती है।

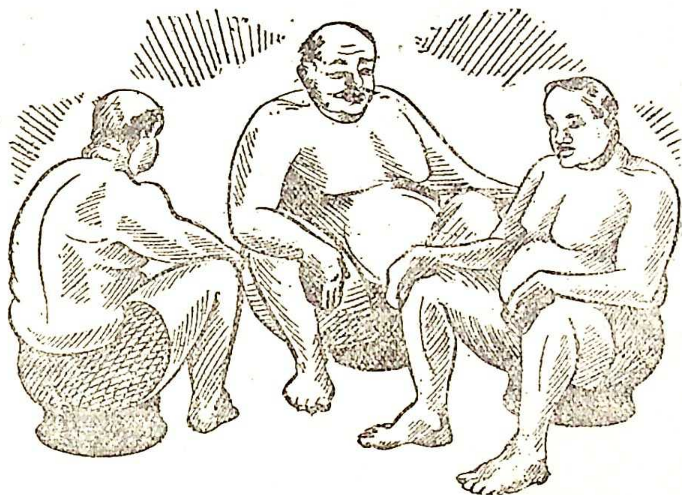
खुराक छै चीज़ों से बनती है, जिनको खुराक के अंश या हिस्से कह सकते हैं। इनमें से एक है प्रोटीन, जो शरीर के पालन-पोषण अर्थात् परवरिश के लिए होती है। साधारणतः यह मछली, मांस, अंडे, दूध, मटर और दालों में पायी जाती है। इन चीजों के खाने से प्रोटीन हमारे शरीर में पहुँचती है और हमारे शरीर का मांस और मांस,-पेशियां (पट्ठे) बनाती तथा बढ़ाती और मजबूत करती है। इस तरह सारे शरीर का पालन-पोषण और पुष्टि होती है। क्यों बेटी चंदा, समझ गयीं न ?

चंदा—हाँ पिता जी, पर हम घी और मक्खन क्यों खाते हैं ?

पिता जी—सुनो बेटी ! खुराक का दूसरा अंश है चिकनाइयाँ। हमारे शरीर में शक्ति और गर्मी अधिकतर इन्हीं से पैदा होती हैं। परन्तु इनको बहुत अधिक खाने से शरीर भद्दा और मोटा हो जाता है। घी, मक्खन,

तेल, जामनों की चर्बी आदि खाने से चिकनाइयाँ शरीर में जाती हैं।

चंदा—माता जी वह दुर्गा मोटा जो हमारे घर के पास रहता है, क्या बहुत चिकनाइयाँ खाता है? और दीना तथा रक्खा भी? क्योंकि वे सब खूब मोटे हैं। बड़े बड़े तोंद निकाले हुए जब वे चलते हैं तब मुझे तो बड़ी हँसी आ जाती है।



आकृति -19 बहुत चिकनाइयाँ और कार्बोहाइड्रेट खाने के फल।

माता जी—हाँ बेटी, बिल्कुल ठीक। वे चिकनाइयाँ तो खूब खाते ही हैं पर साथ ही कार्बोहाइड्रेटों का भी अधिक प्रयोग करते हैं।

रवि—पिता जी! कार्बोहाइड्रेट जो माता जी ने

कहा वह क्या है ?

पिता जी—कार्बोहाइड्रेट खुराक का तीसरा हिस्सा है। यह गुड़, खाँड, शक्कर, मिश्री आदि में पाया जाता है। कनक, मक्की, बाजरा, चावल और आलू आदि में भी कार्बोहाइड्रेट होते हैं। जो कलफ़ धोबी लगाता है वह निरा कार्बोहाइड्रेट है और कनक, चावल, आलू आदि से निकाला गया होता है। अंग्रेज़ी में इसको स्टार्च और संस्कृत में श्वेतसार कहते हैं। यह सुनते हुए बुरा तो अवश्य प्रतीत होता है। कि वही कलफ़ जिससे धोबी हमारे कपड़ों को कड़ा करता है, खुराक का भी हिस्सा है। परन्तु बात ऐसी ही है। गुड़ और खाँड या शक्कर, तुम को ज्ञात ही होगा कि ये गन्ने के रस से निकाले जाते हैं। अंगूर, खजूर तथा और फलों से भी खाँड निकाली जाती है। चुकन्दर नामक कंद का नाम तो तुमने सुना ही होगा, शायद खाया भी हो इसमें भी काफ़ी शक्कर होती है और व्यापार के लिए कहीं कहीं चुकन्दर से खाँड निकालते हैं।

रवि—पिता जी, हमारा नौकर सौनू जो पहाड़ का रहने वाला है, कहता था कि जब पहाड़ियों को अनाज नहीं मिलता तब वे आलू खाकर ही निर्वाह करते हैं। क्या यह ठीक हो सकता है।

पिता जी— हाँ, बेटा ! जैसा अभी कहा था, आलू

में भी तो स्टार्च या श्वेतसार होता है। जैसे और सब तरह के खानों में, वैसे ही आलू में भी कार्बोहाइड्रेट के अतिरिक्त खुराक के और भी कई अंश सम्मिलित हैं, परन्तु कार्बोहाइड्रेट बहुत ही अधिक हैं।

चन्दा—पिता जी, कार्बोहाइड्रेटों से शरीर का क्या काम निकलता है ?

पिता जी—सुनो बेटी ! चिकनाई की तरह ये भी शरीर में गर्मी और शक्ति पैदा करते हैं, और यदि चिकनाई कम भी खायी जावे तो उसका काम कर देते हैं। वास्तव में शरीर को जितनी गर्मी और शक्ति चाहिए वह सब यदि केवल चिकनाई से लेने का यत्न करें तो हानि पहुँचती है। एक तो उतनी चिकनाई पच नहीं सकती और दूसरे जिन अन्नों से कार्बोहाइड्रेट मिलते हैं, उनमें कुछ ऐसी और चीज़ें भी हैं जिनकी शरीर को आवश्यकता है। चिकनाइयों से निरी गर्मी ही गर्मी मिलती है। इसलिए न निरी चिकनाई और न निरे कार्बोहाइड्रेट ही खाना चाहिए।

15—खुराक के अंश—2

चन्दा—अच्छा पिता जी, अब हमें खुराक का चौथा हिस्सा बताइए।

पिता जी—चौथा हिस्सा खुराक का तरह-तरह के नमक हैं। सम्भवतः, तुम को यह सुनकर अचरज हो कि नमक तरह-तरह के होते हैं, परन्तु बात ऐसी ही है। तुम लोग तो समझते होगे कि जो नमक खाने में डालते हैं, बस वही नमक है। परन्तु वास्तव में इसी तरह की और भी बहुत सी चीज़ें हैं जिनको नमक कहते हैं।

खुराक के अन्य अंशों की तरह नमक भी शरीर के लिए बहुत आवश्यक है और खाने को स्वादिष्ट भी बनाता है। एक तरह का नमक हड्डियों को दृढ़ करता है। एक दूसरी तरह का नमक न मिलने से गले में घेघे (फूलन) की बीमारी हो जाती है। इसी तरह से भाँति भाँति के नमक शरीर में न पहुँचने से भिन्न-भिन्न प्रकार की बीमारियाँ हो जाती हैं।

इसके बाद चन्दा ने पूछा—"पिता जी पानी क्यों पीते हैं?" रवि हँस कर बोल उठा—"भला क्या यह भी कोई पूछने वाली बात है? हमें प्यास लगती है, और उसको बुझाने के लिये हम पानी पीते हैं।" पिताजी ने कहा, "यह तो ठीक है बेटा! परन्तु प्यास लगती

ही क्यों है? भूख लगती है कि पेट खाली हो गया और शरीर बतला रहा है कि उसमें भोजन पहुँचाने की आवश्यकता है। इसी तरह प्यास तब लगती है जब कि शरीर में पानी की कमी हो जाती है। तुमको बतला चुके हैं कि सारे शरीर का कोई दो तिहाई हिस्सा केवल पानी ही पानी है। वास्तव में पानी खुराक का पाँचवाँ अंश है। पानी मनुष्य के जीवन के लिये एक बहुत आवश्यक वस्तु है। पानी खुराक को पचाने में सहायता देता है। पची खुराक गाढ़ी लस्सी की तरह होती है। बिना पानी के ऐसा होना असम्भव है। यह लस्सी के रूप की पची खुराक ही खून में बदल जाती है। इसलिये कह सकते हैं कि पानी के ही द्वारा खून बनता है।"

रवि ने कहा—हाँ, पिता जी, यह तो आप ने पहले भी पानी का वर्णन करते हुए कहा था कि शरीर का दो तिहाई हिस्सा पानी है। परन्तु इतना पानी पीते तो नहीं।

पिता जी ने कहा—पीने के अतिरिक्त अन्य भोजन से भी पानी शरीर में पहुँचता है। निरी चिकनाइयों के अतिरिक्त और कोई ऐसी खाने की चीज़ नहीं जिसमें पानी थोड़ा बहुत न हो। बहुत सी खाने की चीज़ें तो ऐसी हैं कि जिनमें अधिकतर पानी ही पानी है। जैसे फल, सब्ज़ियाँ आदि।

चन्दा—पिता जी, अभी उसी दिन आप बा र से

फलों की बड़ी भारी टोकरी लाये थे और आप ने कहा था कि फल खाना भी आवश्यक है। वह क्या इसीलिए कि बहुत सा पानी होता है ?

पिता जी—हाँ, बेटी ! फल और सब्ज़ियाँ खाना एक तो इसलिए आवश्यक है कि उनमें बहुत सा पानी होता है दूसरे इसलिए कि उनमें तरह तरह के नमक होते हैं। परन्तु इनको खाने का एक तीसरा कारण और भी आवश्यक है। वह यह कि विशेषतः फलों और सब्जियों से खुराक का छठा अंश हमारे शरीर में पहुँचता है। खुराक का यह छठा हिस्सा विटामिन है। विटामिन कई तरह के होते हैं। अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों पर उनके नाम रखे गये हैं—विटामिन ए, विटामिन बी, विटामिन सी, विटामिन डी, ये चार प्रधान हैं। विटामिन सी अधिकतर फलों और सब्जियों में होती है। आमला, अमरूद, नारंगी, मालटा, निम्बू, टमाटर आदि तथा हरी सब्जियाँ जैसे ताजी हरी बन्दगोभी, पालक, कुलफा या अन्य साग आदि। विटामिन ए और डी दूध, दही, मक्खन आदि से मिलती हैं, पर मछलियों के तेलों और गाजर में बहुतायत से होती है। विटामिन बी विशेष रूप से दही और पनीर में होती है। अधिक आँच मिलने पर विटामिन सी का नाश हो जाता है इसीलिए फल, मूली, गाजर आदि बिना आँच पर चढ़ाए ही खाना ठीक है।

चन्दा ने माताजी से पूछा कि—"विटामिन यदि न मिले तो क्या होता है?" माताजी ने बतलाया कि "विटामिनें होती तो हैं इन सब चीजों में बहुत ही थोड़ी परन्तु इतनी थोड़ी भी यदि शरीर में न पहुँचे तो तरह तरह की छोटी बड़ी बीमारियां हो जाती हैं। कह सकते हैं कि—

"फल भाजी को रोज जो खावे,
डाक्टर को वह दूर भगावे।"

16—अन्न-पाचन—1

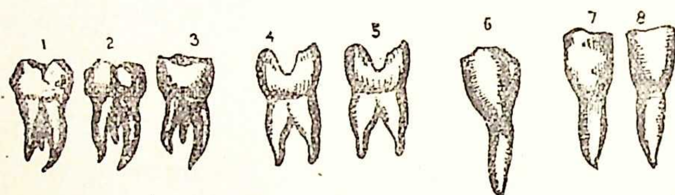
माता जी—अच्छा बच्चो! आओ, अब तुम्हें यह बतलावें कि अन्न पाचन क्या है। अर्थात् खुराक कैसे पच कर शरीर का अंश बन जाता है।

सबसे पहिली बात तो यह है कि खाना चबाना पड़ता है। इसीलिए दाँत होते हैं। बच्चा जब छै-सात महीने का होता है तब उसके दाँत निकलने शुरू होते हैं और दो साल तक बीस दांत हो जाते हैं। ये दूध के दाँत कहलाते हैं। पाँच- साल की आयु में ये दाँत गिरना शुरू होते हैं और उनकी जगह पक्के दाँत निकलने लगते हैं। इनको अन्न के दांत भी कहते हैं।

छै, सात, आठ बरस तक दूध के दाँत सभी गिर

चुकते हैं और बारह तेरह वर्ष तक अट्ठाईस अन्न के दाँत निकल आते हैं। कोई बीस बरस की आयु में चार दाँत और निकल आते हैं। इस तरह युवा स्त्री या पुरुष के कुल बत्तीस दाँत होते हैं।

सारे दात एक जैसे नहीं होते। सामने के चार दाँत ऊपर के जबड़े में और चार ही नीचे के जबड़े में कतरने या काटने के लिए होते हैं। इसलिए इनमें पैनी धार होती है। इन आठों को कर्तनक दन्त कहते हैं। कर्तनक का अर्थ है कतरने या काटने वाला। इन दाँतों के काटने के अतिरिक्त दो और भी काम हैं। एक तो शोभा और दूसरा ठीक तरह से बोलना।



आकृति 20 आधे जबड़े के दांत। 1 अकल डाढ़
1. 2. 3. बड़ी डाढ़े 4. 5. छोटी डाढ़ें 6. शूल दन्त
7. 8. कर्तनक दन्त।

कर्तनक दान्तों के बाद दोनों ओर दोनों जबड़ों में एक-एक नुकीला-सा दाँत होता है। इन चारों का शूलदंत

या सुवादांत कहते हैं। ये चीरने फाड़ने के काम में आते हैं। कुत्ते जैसे जानवरों में इस तरह के दाँत बहुत बड़े होते हैं। इसलिए अंग्रेजी में इनको कैनाइन दाँत कहते हैं। कैनाइन का अर्थ है कुत्ते की तरह।

इस प्रकार बारह दाँत हो गये। रह गये बीस। ये शूल दन्तों के पीछे ऊपर नीचे दोनों तरफ़ पाँच-पाँच होते हैं। ये बीस दांत चबाने के लिए होते हैं और इनको चर्वणक दंत अर्थात् चबाने के लिए दाँत कहते हैं। जैसे कि आटा पीसने की चक्की के पाट समतल नहीं किन्तु दानेदार होते हैं, वैसे ही इन चबाने के दाँतों के सिरे भी समतल नहीं होते, ना हीं काटने वालों दाँतों की तरह पैनी धार वाले और ना ही सुवादाँतों की तरह नुकीले। चबाने वाले दांतों की सतह चौड़ी होती है और दानेदार अर्थात् ऊपर नीची ठीक आटा पीसने की चक्की के पाटों की तरह की। ये दाँत खाने को चबा-चबा कर मानो पीसते हैं। इसलिए इनको पीसने वाले दाँत भी कहते हैं। इन बीस दाँतों में से प्रत्येक को डाढ़ कहते हैं। प्रत्येक ओर की पाँच डाढ़ों की दो अगली डाढ़ें ज़रा छोटी होती हैं; पिछली तीन-तीन डाढ़ें ही खूब चौड़ी और बड़ी होती हैं।

सबसे पीछे के जो चार दाँत हैं, ऊपर नीचे, दोनों ओर, एक-एक, ये ही चार सबसे पीछे निकलते हैं। देखने में और काम करने के लिए तो ये अपने आठों साथी बड़ी डाढ़ों की तरह ही होते हैं, परन्तु इनको अक़्ल डाढ़ कहते हैं; क्योंकि ये युवावस्था में निकलते हैं।

मुँह में रखने के बाद, खाना पचाने की क्रिया में सबसे पहला काम जो करना होता है, वह खाने को ठीक तरह से चबाना है। इस काम में सबसे बड़ा भाग तो दाँत लेते हैं पर जीभ भी चबाने में सहायता देती है, क्योंकि जीभ से हम खाना इधर-उधर ठेलते हैं, ताकि दोनों ओर की डाढ़ें चबाने में योग दें। इसके अतिरिक्त जीभ ही के द्वारा हम चबायी हुई खुराक का कौर बना कर कंठ में घुसेड़ते हैं, अर्थात् निगलते हैं।

मुँह में बहुत-सी छोटी-छोटी थैलियाँ हैं, जिनसे थूक निकलती है। यह थूक भी पाचन क्रिया में बड़े काम की वस्तु है। अच्छा और स्वादिष्ठ खाना देख कर और सूँघ कर ही मुँह में पानी आ जाता है, अर्थात् थूक बननी शुरू हो जाती है।

थूक एक तो मुँह को तर रखती है, दूसरे चबाने

में भी सहायता देती है, क्योंकि वह खाने को तर रखती है और इस तरह चबायी खुराक को नरम बना कर उसको आसानी से निगलने योग्य बना देती है। परन्तु थूक का एक तीसरा काम है जो सबसे अधिक आवश्यक और महत्त्वशाली है। वह यह कि थूक में एक ऐसी चीज़ होती है जो स्टार्च अर्थात् श्वेतसार को शक्कर में बदल देती है, जिससे कि इस तरह का खाना शरीर का अंश बन सके।

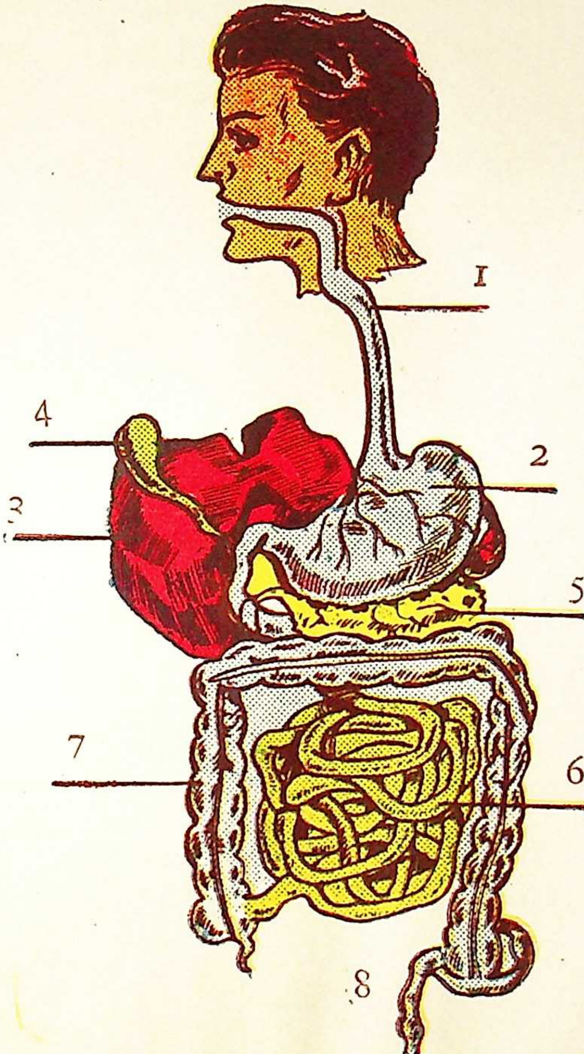
श्वेतसार ऐसी वस्तु है जो पानी में घुल नहीं सकती। और जो चीज़ घुली हुई न हो वह हमारे खून में नहीं पहुँच सकती जब तक कि कोई चीज़ खून में न पहुँचे तब तक वह शरीर के किसी अङ्ग में भी नहीं पहुँच सकती, क्योंकि एक अकेला खून ही ऐसी चीज़ है जो कि खाने के हर अंश को अपनी-अपनी जगह पहुँचाता है। जब तक कि खाने का यह अंश श्वेतसार के रूप रहता है तब तक वह पचनशील नहीं होता अर्थात् पचाया नहीं जा सकता। शक्कर घुलनशील है और पचायी जा सकती है। इसलिए देखो कि थूक कैसे काम की चीज़ है।

इसीलिए खाने को खूब चबा-चबा कर, उसका

स्वाद लेकर, खाना चाहिए। चबाने से एक तो उसके ऐसे छोटे-छोटे टुकड़े हो जाते हैं, जो पेट में जाकर जल्दी और आसानी से घुलनशील हो सकते हैं। और दूसरे जितनी अधिक देर खाना चबाया जायगा उतना ही अधिक उसका श्वेतसार शक्कर में बदल कर पचनशील हो जावेगा

17--अन्न पाचन--2

मुँह के बाद कण्ठ है, जिसका सम्बन्ध निगल—नलिका द्वारा पेट से है। इस नल से होकर खुराक पेट में पहुँचती है। वास्तव में तो साधारणतः पेट से मतलब है शरीर का वह सारा भाग जो छाती के नीचे और जाँघों के ऊपर है। पेट का वह भाग जहाँ कि मुँह में रक्खा हुआ भोजन निगल नली में होकर पेट में पहुँचता है, आमाशय कहलाता है। आमाशय मशक के रूप की एक थैली है जो छाती की हड्डियों के नीचे बायें तरफ को है। इसकी दीवालें मोटी-मोटी पेशियों से बनी हुई हैं। दीवारों में चुन्नटदार झिल्ली सी होती है। आमाशय के अन्दर भोजन पहुँचते ही इसमें से एक तरह का रस निकलता है जो प्रोटीन को पचाने में सहायता देता है।



1. निगल नल, 2. आमाशय, 3. पक्वाशय, 4. यकृत्,
5. क्लोम ग्रंथि, 6. छोटी आँतें, 7. बड़ी आंतें, 8. मलद्वार,

जब खुराक आमाशय में पहुँचती है तब उसकी पेशियां चक्की की तरह चलने लगती हैं, और खुराक को पीस कर एक गाढ़ा शोरबा या गाढ़ी लस्सी सी बना देती हैं।

इस तरह दाँतों से और आमाशय की पेशियों से पिसी हुई गाढ़ी लस्सी जैसी खुराक अब आमाशय से निकल कर अन्न प्रणाली के अगले अंग, अँतड़ियों के पहले हिस्से में पहुँचती है। अँतड़ियों के इस प्रथम भाग को पक्वाशय कहते हैं।

खुराक का श्वेतसार अंश तो मुँह ही में थूक द्वारा बहुत कुछ पचनशील बन चुकता है। उसका प्रोटीन अंश आमाशय में पचनशील बनता है। पक्वाशय में और भी कई तरह के रस आकर खुराक में मिलते हैं। एक तरह का रस तो यकृत् अर्थात जिगर से आता है। इस रस को पित्त कहते हैं इसीलिए यकृत् को पित्ताशय भी कहते हैं। पित्त चिकनाई हजम कराता है। एक दूसरा रस एक दूसरे अंग से आता है। इस अंग को क्लोम ग्रंथि, अंग्रेजी में पैनक्रिअस कहते हैं। स्वयं पक्वाशय की दीवारों से भी एक रस निकलता है। ये दोनों रस खुराक के हर अंश को पचाने में सहायता पहुँचाते हैं। श्वेतसार और प्रोटीन का जो कुछ भी अधपचा हिस्सा बचा बचाया रह जाता है, वह सब भी पक्वाशय में इन सब रसों द्वारा पचाया जाता है। चिकनाई केवल इसी पक्वाशय में ही

पचनशील होती है।

पक्वाशय कोई एक फुट का होता है। छोटी अँतड़ियों का शेष भाग कोई १६ फुट लम्बा और एक इञ्च चौड़ा होता है और खूब बल खाये हुए लपेटा-लपाटा आमाशय के नीचे इधर-उधर घुमा फिरा कर रक्खा रहता है।

रवि—हाँ, तभी तो बीस फुट लम्बी होते हुए भी पेट में समा जाती है, नहीं तो बाहर न निकल आवे!

माता जी—इन छोटी अँतड़ियों में ही खुराक खून में जा मिलती है। अँतड़ियों की दीवारें मखमल की तरह हैं। जैसे मखमल में हजारों छोटे-छोटे बाल या रोएँ होते हैं वैसे ही छोटी आँतों की दीवारों में भी लगे होते हैं। इन रोओं के एक ओर अँतड़ियों की नली में, तो खूब पिसी और घुली हुई अर्थात् पची हुई खुराक होती है और दूसरी ओर अर्थात् रोओं के अन्दर, खून की बड़ी ही पतली-पतली महीन नालियां। रोओं और नालियों की पतली दीवालों में से छन कर खुराक खून में जा मिलती है। खून की नालियां शरीर के हर एक भाग में, कोनों-कोनों तक पहुँची हुई हैं। इनमें खून सदैव बहता रहता है। इस तरह खुराक शरीर के सब भागों में पहुँच जाती है।

रवि—माता जी, क्या सारी खुराक खून में मिल जाती है ?

माता जी—नहीं बेटा ! खुराक का जो हिस्सा रसों में घुल नहीं सकता, वह बच जाता है और बड़ी आँतों में पहुँचता है। इस न पची हुई खुराक में जो कुछ पानी होता है वह तो इन बड़ी अँतड़ियों की दीवारें भी सोख कर खून में पहुँचाती हैं। पर जो सख्त अर्थात् अनघुली चीज़ें होती हैं वे मल के रूप में मलद्वार से बाहर निकाल दी जाती हैं।

मुँह से लेकर मलद्वार तक बड़ा लम्बा नल है, जिसके कई हिस्से हैं, अधिक भाग तो नल रूप में है परन्तु आमाशय थैली के समान है। इस नल के एक द्वार से अन्न शरीर के अन्दर पहुँचता है और नली में ही पचनशील होकर, उसकी दीवारों को पार कर खून में जा मिलता है। जो हिस्सा खुराक का इस तरह शरीर का हिस्सा नहीं बन सकता, वह मलद्वार से बाहर निकाल दिया जाता है। इस सारे नल को अन्न प्रणाली कहते हैं।

बच्चों को ठीक तरह से अन्न प्रणाली के भिन्न-भिन्न हिस्सों को समझाने के लिए, माता जी ने एक चित्र

(आकृति 21) खींच कर बतलाया था।

18—वनोत्सव की महिमा

माता जी—बच्चो, क्या तुम जानते हो कि वृक्षों और वनों को देश का धन कहते हैं और क्यों कहते हैं?

चंदा—हाँ माता जी! क्योंकि जंगलों में वृक्ष होते हैं और वृक्षों में फल लगते हैं या उनसे लकड़ी मिलती है।

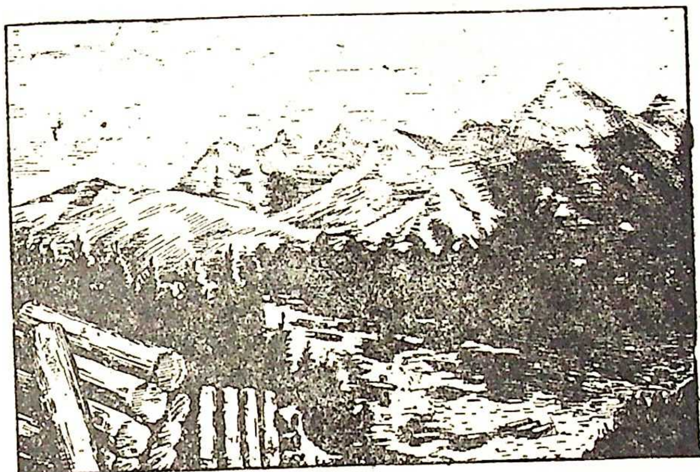
माता जी ने रवि से पूछा—"तुम क्या कहते हो?" रवि ने कहा कि "वही जो चंदा।"

माता जी—हाँ बच्चो। परन्तु इन दो बातों के अतिरिक्त वृक्षों और इसलिए वनों के और भी बहुत से लाभ और उपयोग हैं, नहीं तो वनोत्सव इतनी धूम-धाम से क्यों मनाये जाते?

वृक्षों की तो जितनी सराहना की जाय थोड़ी है। इनके बिना तो दुनिया उजड़ी प्रतीत होती है। इनकी ठंडी ठंडी छाया और हरा भरा रंग तो मानो पृथ्वी की भारी सजावट है। जब कोई पथिक थका-माँदा, धूप से जलता हुआ, किसी घने पेड़ की छाया में आता है, तब वह कैसा सुख अनुभव करता है, मानो एक बार फिर उसमें

जान आ गयी हो। हर देश की सरकार का यह एक मूल कर्त्तव्य है कि वह वनों की रक्षा करे।

हमारे देश में तो अब कई वर्षों से वनोत्सव मनाया जाने लगा है। अब बड़े-बड़े आदमी अपने हाथों से नए पेड़ पौधे लगाते हैं और लोगों को आदेश और उपदेश



वन दृश्य

देते हैं कि केवल पेड़ लगाने से ही वनोत्सव नहीं समाप्त हो जाता किन्तु साल भर लगाए हुए पौधों की सेवा करना आवश्यक है ताकि अब अगले वर्ष फिर वनोत्सव का दिन आवे तो नये पौधे लगाते समय पिछले साल लगाये हुए पौधे दृढ़ता पूर्वक जड़ पकड़ चुके हों, और हरे

भरे हों।

रवि—माता जी, कुछ दिन हुए हमारे स्कूल में भी वनोत्सव मनाया गया था। इन्सपैक्टर साहब स्वयं पधारे थे और उन्होंने कई पौधे लगाये थे। हम सब लड़कों ने मिल कर पौधों को पानी दिया था और अब हम लोगों की बारी-बारी ड्यूटी लगा दी गयी है कि कुछ लड़के नये लगाये हुए पौधों को प्रति दिन सींचा करें।

माता जी—यह तो बड़ी अच्छी बात है। जंगलों से हमें बहुत सी चीज़ें मिलती हैं। मकान बनाने और घर का सामान बनाने के लिये लकड़ी, बांस, जलाने की लकड़ी ये सब तो मिलते ही हैं, पर साथ ही घरेलू पशुओं के लिये खाना भी जैसे घास, पत्ती आदि। भाँति भाँति के पशु, पत्ती वनों में पलते हैं जो कई तरह से मनुष्य जाति के काम में आते हैं।

एक दूसरी तरह का लाभ जंगलों से यह है कि ये हवा को ठण्डा बनाते हैं। यही नहीं समुद्रों के ऊपर जो भाप उड़ कर वर्षा ऋतु के बादलों के रूप में देश में आती हैं वे बादल भी जंगलों या वृक्षमय प्रदेशों की ओर खिच से जाते हैं और पानी बरसाते हैं, जिससे देश की खेती-बारी ठीक तरह से हो सकती हैं।

वृक्षों में तीसरे प्रकार का लाभ यह है कि पहाड़ों और जंगलों की उपजाऊ मिट्टी को पानी या मेंह में मिल कर बह जाने से रोकते हैं। यह देखा गया है कि जहाँ पहाड़ों पर से जंगल बिल्कुल काट दिये गये हैं, वहाँ से इतनी मिट्टी और कंकड़ बह कर चले गये हैं कि एक ओर तो ऐसी जमीनों में खेती बारी नहीं हो सकती, और बह कर आये हुए कंकड़ मैदानों की जमीन को इस तरह से ढक देते हैं कि वह भी खेती के योग्य नहीं रहती।

चंदा—माताजी, हमारे पंजाब के मैदानों में कौन कौन से पेड़ अधिकतर होते हैं?

माताजी—पीपल, बड़ (बोड़), शीशम, बबूल (कीकर), जंड, ढाक, नीम, तुन, आम, और जामुन आदि ये बड़े-बड़े पेड़ होते हैं तथा और कई तरह के छोटे-छोटे पेड़ भी होते हैं।

रवि—और पहाड़ों पर?

माताजी—देवदार (दियार), चीड़, कैल, पौलंदर, अखरोट, आदि।

परन्तु पिता जी को भी वन के पेड़ पौधों अर्थात् वनस्पति संसार के बारे में कुछ कहना था। उन्होंने कहा—

वनस्पति संसार का जितना गुण-गान किया जाय, थोड़ा है, क्योंकि पानी को छोड़कर और जो कुछ भी पशु या मनुष्य का आहार है वह सब पेड़-पौधों ही की कृपा से मिलता है। आज दिन के पौधे तो हमें भोजन और ईंधन देते हैं, लाखों करोड़ों वर्षों की वनस्पतियों की कृपा से कोयले की खानें बनी थीं और मट्टी का तेल, पटरोल आदि भी।

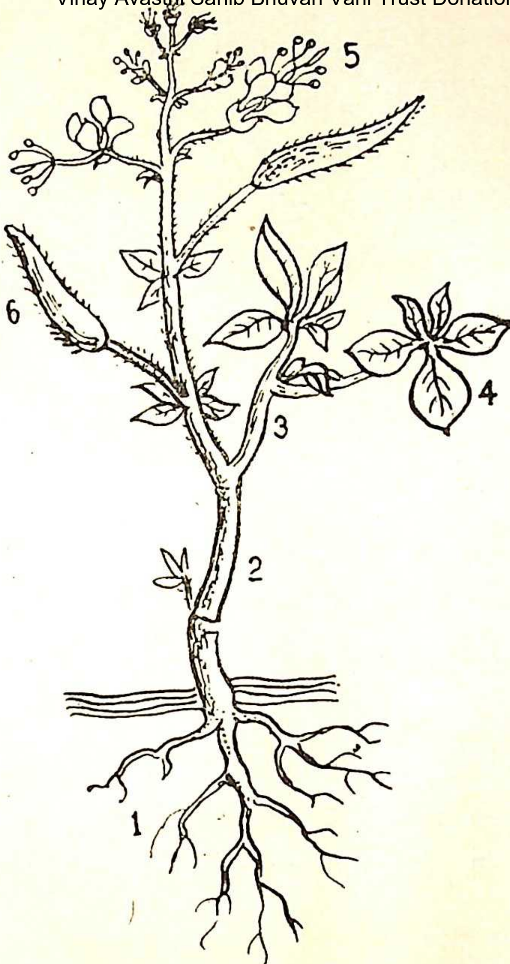
इनके अतिरिक्त, आजकल का बहुत सा काग़ज़ पेड़ों की लकड़ी और पत्तियों से बनाया जाता है। और तुमको ज्ञात ही होगा कि रबड़ और कुछ नहीं, एक विशेष प्रकार के पेड़ों से निकला दूध या गोंद है। हमारे दक्षिण देश में और लंका तथा मलाया जैसे हमारे पड़ोसी देशों में रबड़ के वृक्षों की खेती होती है।

19—वनस्पति जीवन (1) जड़

चंदा—पिताजी, पौदे कैसे बढ़ जाते हैं? क्या इन में भी जान है?

पिताजी—हाँ बेटी, ये भी हमारी तरह जानदार हैं, खाते पीते हैं, बढ़ते हैं, फूलते और फलते हैं।

रवि—पिताजी, पौदों का तो कोई मुँह नहीं



आकृति 22—पौधे के विविध अंग—1—जड़, 2—तना, 3—शाखें; 4 —पत्तियाँ; 5—फूल; 6—फल।

दिखाई देता, ये खाते पीते कैसे हैं।

पिता जी—बेटा, ये अपनी खुराक जड़ और पत्ती से लेते हैं। पत्तियों में बहुत से छोटे छोटे-छेद होते हैं। वही पौधे के मुँह हैं। जड़ के द्वारा वह धरती से पानी सोखते हैं। पानी में तरह-तरह के नमक घुले हैं, वे भी पानी के साथ ही जड़ों के द्वारा पौधों के शरीर में पहुँचते हैं।

वनस्पति संसार में अर्थात् पौधों की दुनियाँ में दो तरह के प्राणी होते हैं, एक तो फूलदार और दूसरे बिना फूलों के। वे-फूलदार पौधों के बारे में फिर कभी बतलावेंगे। फूलदार पौधे के चार मुख्य अंश होते हैं। एक जड़, दूसरा तना, शाख और डण्ठल, तीसरा पत्ते पत्तियाँ और चौथा फूल तथा फल। जड़ वह हिस्सा है। जो ज़मीन के अन्दर होता है। जड़ पौधे की नींव है। जैसे घर की दीवारें नींव पर खड़ी होती हैं, वैसे ही पौधा भी जड़ के सहारे जमीन पर गड़ा होता है और इसी जड के द्वारा पौधा ज़मीन में से पानी सोखता रहता है।

पिता जी ने रवि से कहा—"बेटा रवि! बाहर से एक फूल वाला पौधा, पूरा का पूरा ज़मीन से खुदवा

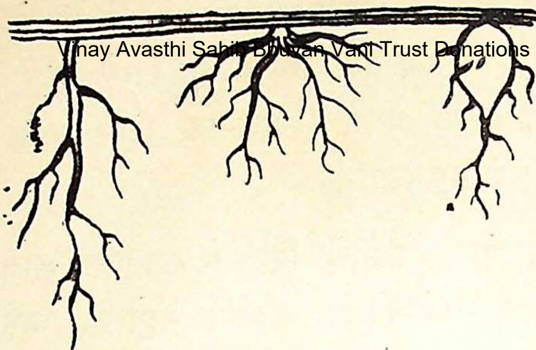
कर ले आओ।" "शाबाश" पिता जी ने रवि से पौधा

लेते हुए कहा--अब तुम्हें पौधे के सारे हिस्से ठीक तरह से समझ में आ जायेंगे।" एक-एक हिस्सा -छूछू कर पिता जी ने समझाया।

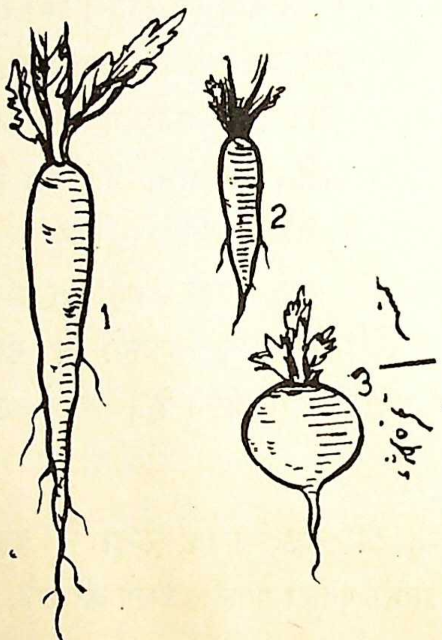
यह जो सबसे नीचे, मिट्टी से भरा हुआ, बालों की तरह, झाड़ सा देखते हो, ये ही है पौधे की जड़ें हैं। देखो जड़ के ऊपर की ओर भूमि से निकला हुआ एक सीधा डंठल है। यह है पौधे का तना। इसी से शाखें निकली हैं, जिन पर पत्ते लगे हैं। प्रायः पत्ते डंठल द्वारा शाख से लगे होते हैं। वास्तव में तना, शाख और डंठल में कोई भेद नहीं। जब पौधा निकलता है तब उस का केवल एक डंठल ही निकलता है, जिस पर एक दो पत्ते लगे होते हैं। बढ़कर यही डंठल तना हो जाता है और उससे शाखें निकलती हैं। शाखों से डंठल, जिन पर पत्ते या पत्तियां लगी होती हैं। सबसे ऊपर देखो फूल हैं।

जड़ों की ओर संकेत करके चन्दा ने कहा—क्या जड़ें सदैव इतनी पतली-पतली, बालों की तरह, होती हैं।

पिता जी—हाँ बेटा! शुरू-शुरू में सभी जड़ें। ऐसे



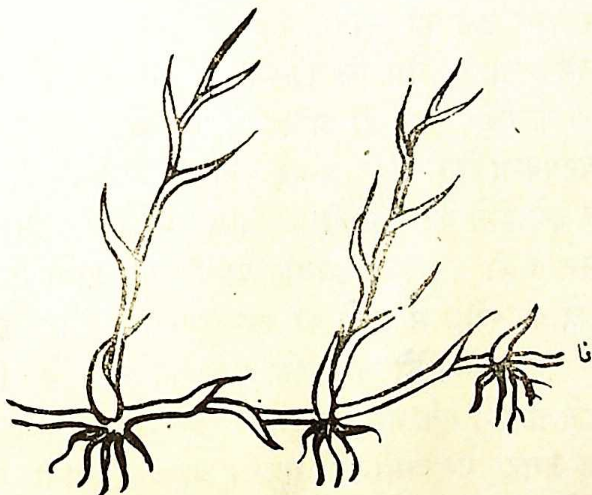
आकृति 23—जड़ें ।



आकृति 24—मूली, गाजर, शलजम ।



आकृति 25—बड़े वृक्ष की बड़ी जड़।



आकृति 26—घास का पौधा

ही महीन बालों की तरह होती हैं। परन्तु बढ़ते बढ़ते

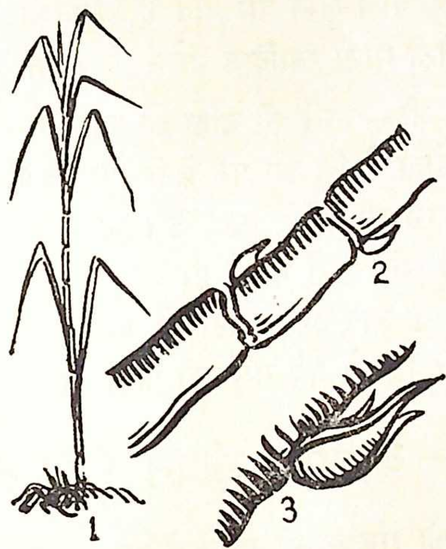
पुरानी जड़ें मोटी हो जाती हैं। पर जड़ के सबसे निचले हिस्से इसी तरह के महीन रेशों वाले होते हैं। हाँ कई एक पौधे ऐसे हैं जिनकी लगभग सारी जड़ मोटी और लम्बी होती है, जैसे मूली, गाजर, शलजम। परन्तु सिरे पर ये भी बालों सरीखी हो जाती हैं।

कई जड़ें पतली और बड़ी लम्बी होती हैं, खास कर उन बूटों की जो बंजर ज़मीन में उगते हैं, जैसे बाथु आदि। बड़े-बड़े पेड़ों की जड़ें तो गजों लम्बी होती हैं और दूर-दूर तक फैली होती हैं। यह इसलिए कि एक तो इन बड़े वृक्षों को खुराक अधिक चाहिए और दूसरे उन को खड़ा रखने के लिए दृढ़ नींव की आवश्यकता है; जैसे कि जितना ही बड़ा तंबू हो उसके रखने के लिए उतने ही अधिक बाँसों और रस्सियों की आवश्यकता होती है। बड़े-बड़े पेड़ों की जड़ों के लम्बे और फैले हुये होने का एक तीसरा कारण भी है। ज़मीन से मिलने वाली खुराक, अर्थात् पानी और पानी में घुले नमकों की खोज में जड़ों को दूर-दूर फैलना पड़ता है।

चंदा—तब तो जड़ें बड़े काम की चीज़ है। पिता जी, कल मैंने एक घास का पौधा उखाड़ा था। वह तो जगह-जगह पर ज़मीन में गड़ा हुआ था, मानो लम्बे तार में गुथा हुआ हो, और सारे तार पर जड़ें सी लटक

रही थीं।

पिताजी,—हाँ बेटा, घास में लम्बा तार सा है वह उसका तना है। इसमें जगह-जगह गाठें होती हैं, जिनसे ऊपर तो पत्तियाँ निकल आतीं हैं, नीचे जड़। वट वृक्ष अर्थात् बड़ (बोड़) के पेड़ में भी ऐसी जड़ें होती हैं,



आकृति 28—गन्ना। 1—पौधा, 2—पोर और गाँठ
3—गाँठों की कलियाँ

जिनको हवाई जड़ें कहते हैं। तुम ने देखा होगा कि बोड़ में जगह-जगह लटों की तरह हवाई जड़ें नीचे लटकी होती हैं। बढ़ते-बढ़ते ये ज़मीन तक पहुँचजाती हैं और

अन्दर पहुँचकर फैल जाती हैं। इस तरह बोड़ का पेड़

दूर-दूर तक फैल जाता है।

"गन्ने की आकृति याद है, रवि ?" पिता जी ने पूछा।

रवि—हाँ पिता जी, उसमें बड़ी गाठें होती हैं। दो गाँठों के बीच लम्बे पोर होते हैं, जिनको ही छील काटकर मीठी-मीठी स्वादिष्ठ गंडेरियाँ बनती हैं।

पिता जी—गन्ने की गाँठों को ध्यान से देखने पर यह ज्ञात होता है कि उस पर छोटी-छोटी कलियाँ होती हैं जिन्हें गन्ने की आँखें कहते हैं। इन आँखों से पत्ते निकलते हैं और गाँठों में से ही जड़ें निकलती हैं। गन्ना बोने के लिए इन्हीं गाँठों को काट कर ज़मीन में गाड़ देते हैं जिनसे नये गन्ने का पौधा उग आता है।

20—वनस्पति जीवन (2) तना

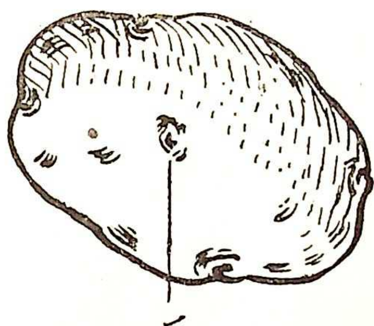
जड़ की राम कहनी सुनने के बाद, चन्दा ने कहा, "पिता जी, अब हमें तने की कहानी सुनाइये।"

पिता जी—लो सुनो। पहले ही बतला चुके हैं कि तना पौधे का वह अंग है जहाँ से पत्तियाँ निकलती हैं। प्रायः तना ज़मीन के बाहर जड़ के ऊपर निकला हुआ होता है और पौधे को सीधा खड़ा रखता है। और यह

भी बतला चुके हैं कि तने से शाखें निकलती हैं, जिन पर पत्तियां लगती हैं। परन्तु कई प्रकार के पौधों का तना भी जड़ की तरह ज़मीन के अन्दर होता है।

रवि—तो पिता जी, क्या ज़मीन के अन्दर वाले तने में पत्ते भी ज़मीन के अन्दर ही होते हैं ?

पिता जी— हाँ बेटा! परन्तु वे पत्ते हरे रंग के नहीं होते किन्तु पपड़ी की तरह होते हैं। जहां-जहां पत्ते होते हैं, उनके बीच में कली होती है, जिससे नई शाखा निकलती है। ज़मीन के नीचे वाले तने की यही पहचान है।

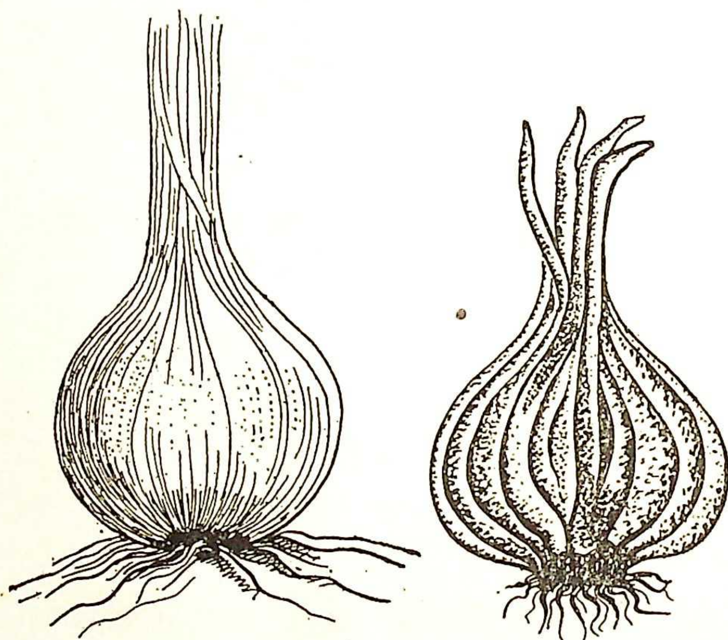


आकृति 29—आलू

पिता जी ने चन्दा को रसोई घर भेज कर एक आलू मँगवाया और दिखा कर कहा—देखो यह है आलू की आँख। वह है उसकी कली।

चंदा—पिता जी, क्या आलू तना है? मैं तो समझती थी कि आलू फल है।

पिता जी—नहीं बेटी, आलू फल नहीं, पर ज़मीन के अन्दर होने वाला तना है। इस में जो गूदा होता है जो कि हम खाते हैं वह नई शाखाओं के लिए खुराक है। कचालू, अरवी, अदरक भी ज़मीन के अन्दर होने वाले तने हैं। इनमें से नई-नई शाखायें ज़मीन के ऊपर



आकृति 30— प्याज़ और उसकी एक तराश

आ जाती हैं; उन्हें हरे पत्ते लगते हैं। परन्तु कई

शाखायें ज़मीन के अन्दर ही रहती हैं जिनमें वे पपड़ी सरीखे पत्ते निकलते हैं।

चन्दा—तो पिता जी, क्या प्याज भी ज़मीन के अन्दर होने वाला तना है ?

पिता जी—रवि एक प्याज तो बाहर से उखाड़ कर ले आओ। तब तुमको उसका सारा हाल बता दूँगा। साथ ही एक लम्बी छुरी भी लेते आना।

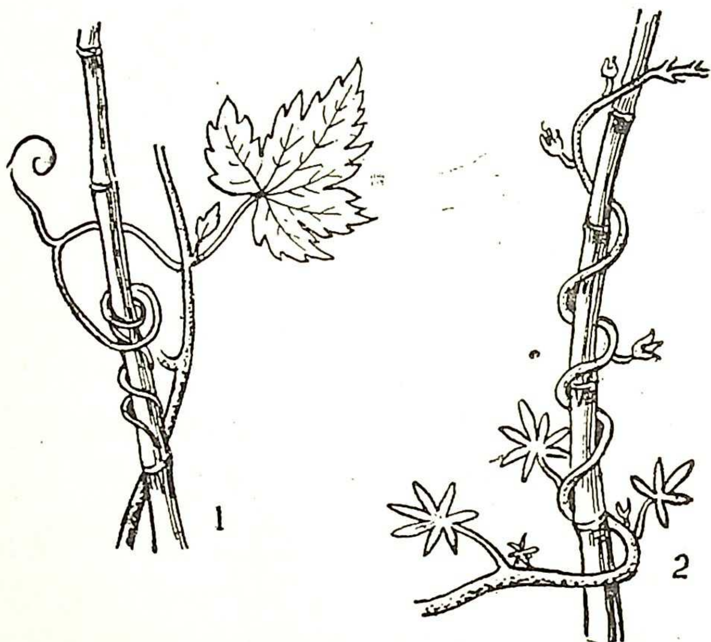
रवि प्याज और छुरी ले आया। पिताजी ने प्याज को बीच से (ऊपर से नीचे) काट कर दो हिस्से कर दिये और फिर कहने लगे—

यह जो नीचे की तरफ़ सफेद, सख़्त सा हिस्सा देखते हो यही प्याज का तना है। इसके नीचे की तरफ देखो जड़ें निकली हुई हैं; ऊपर की तरफ सफ़ेद-सफ़ेद मोटे-मोटे टुकड़े हैं जो खाये जाते हैं। प्याज के ये हिस्से जो खाये जाते हैं, वे पत्तों के निचले सिरे हैं। देखो कि यही आगे जाकर हरे हो जाते हैं। इन्हीं के बीच में नई कलियाँ हैं जिनसे नये प्याज बनते हैं।

रवि—पिता जी, कल जब मैं बगीचे में गया तो माली घिया तोरी की बेलों में लकड़ियां गाड़ रहा था। वह क्यों ?

पिता जी—तो तुम जानते हो कि बेल किसको कहते हैं ?

रवि—जी हाँ ! जो पौधे सीधे नहीं उगते, अपितु इधर-उधर ज़मीन पर ही, या बाँसों पर चढ़कर छत पर फैलते हैं उन्हें बेल कहते हैं।



आकृति 31—(1) सूत्र शाखों वाला और (2) लपेटू तना

पिताजी—बिल्कुल ठीक। घिया, तोरी या बेलों के तने में इतनी शक्ति नहीं होती कि वह सीधा खड़ा हो सके। परन्तु प्रकृति देवी ने ऐसे तनों को एक और अंग

दिया है, जिसकी सहायता से बेलें लकड़ी या और सीधे खड़े होने वाले पौधों का सहारा लेकर ऊपर वायु और प्रकाश में पहुँचती हैं। चलो बाग़ में चलें, वहाँ यह सब अच्छी तरह से दिखलावेंगे।

तीनों बाग़ में पहुँचे। बच्चों ने देखा कि बेलों में लकड़ियां गड़ी थीं और उन पर फल लटक रहे थे। पिताजी ने एक बेल के पास जाकर बच्चों को दिखलाया कि बेल के तने से जगह-जगह पर तार से निकलकर लकड़ियों मेंलिपटरहे थे।

पिताजी—बच्चो, यही तार हैं जिनके द्वारा बेलें लकड़ियों या और पेड़ों को पकड़कर ऊपर चढ़ जाती हैं। ये इन तनों की शाखाएँ हैं। इनको सूत्र शाखा कहते हैं।

घूमते-घूमते तीनों बाग़ में आगे निकल गये। वहाँ चंदा कहने लगी, "देखो पिताजी, अंगूर की बेल भी इस तरह सूत्र-शाखाओं से ऊपर चढ़ रही है।" और रवि चिल्लाने लगा, "पिताजी, यह देखो इश्क पेचा की बेल सारी की सारी लकड़ियों पर लिपट रही है। इसमें तो कोई सूत्र-शाखा नहीं।"

पिताजी—नहीं बेटा, इसमें सूत्र शाखाएँ नहीं होतीं। परन्तु अधिक हवा और धूप लेने के लिए यह भी ऊपर

जाना चाहती है। सो इसे विधाता ने यह बल दिया है कि सारा का सारा तना घुम-घुमा कर लिपट सके। ऐसे तनों को लपेटू तना कहते हैं।

21—वनस्पति जीवन (3) पत्तियाँ

चंदा बाग़ से बहुत तरह के पत्ते भी तोड़ लायी थी और पिताजी से पूछने लगी—"पिताजी, आपने कहा था कि पत्तों में बहुत से छेद होते हैं, जो पत्ते के मुँह कहलाते हैं। मुझे तो इन पत्तों-पत्तियों में कोई छेद नहीं दिखलाई देते।"

पिताजी—नहीं बेटी, इनको खाली आँखों से नहीं देख सकते। बड़े तेज लेन्स से भी नहीं देख सकते। इन छेदों को सूक्ष्म दर्शक द्वारा हज़ार डेढ़ हज़ार गुना बढ़ाकर ही देख सकते हैं। इनको पत्रमुख कहते हैं, जिनके द्वारा हवा पौधे में पहुँचती रहती है, जो कि पौधे के साँस लेने तथा खाने के भी काम में आती है। वास्तव में पौधे के खाने का बहुत बड़ा हिस्सा हवा ही है, जिससे वह श्वेतसार तैयार करता है।

रवि—पिताजी, पहले हमें पत्ते के हिस्से तो बतलाइये।

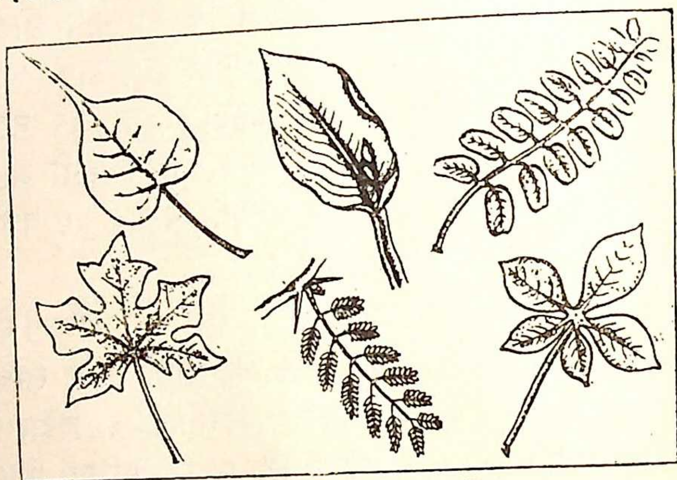
पिताजी—सभी पत्तों की बनावट लगभग एक जैसी

ही होती है। हाँ, उनकी सूरत शकल एक दूसरे से निःसन्देह अलग होती है। पत्ते के दो अंग होते हैं। एक तो पत्ती का ढाँचा और दूसरा इस ढाँचे पर फैला हुआ हरा आवरण अर्थात् चादर।

एक पत्ती उठा कर पिताजी ने दिखलाया और कहा—देखो पत्ती के बीचों बीच में एक मोटी सी नस है, जो आगे तो पतली होती जाती है, पर पीछे मोटी और पत्ती से निकल कर डंठल बन कर शाख़ से जा मिलती है। इसको मध्य नस कहते हैं। मध्य नस से इधर-उधर छोटी छोटी नसें निकली हुई हैं। नसों के इस ढाँचे पर, ऊपर नीचे दोनों ओर हरी चद्दर मढ़ी हुई है। सब नसें खोखली हैं, जिनसे जड़ से आया हुआ पानी और खुराक और ऊपर से आयी हुई हवा, ये सब सारे पत्ते में अच्छी प्रकार पहुँचते रहते हैं।

जैसा अभी बतला चुके हैं, पत्ते कई शकलों के होते हैं। कोई बड़े, कोई छोटे, कोई चौड़े, कोई लम्बे किन्हीं के किनारे सादे होते हैं, किन्हीं के कटावदार। किन्हीं-किन्हीं पेड़ों में कई एक छोटी-छोटी पत्तियाँ मिल कर एक बड़ा पत्ता बनाती हैं। कई एक पौधों में पत्ते सीधे शाख से जुड़े होते हैं, अर्थात् उनमें डण्ठल नहीं होता। घास आदि की पत्तियाँ इसी प्रकार की हैं, वे डण्ठल वाली होती हैं। घासों के पत्ते का निचला हिस्सा

फैला हुआ होता है और तने के चारों ओर लिपटा हुआ। किन्हीं-किन्हीं पौधों की पत्तियाँ सूत्र शाखा की तरह होती हैं, जैसे मटर के ऊपर की पत्तियाँ। किन्हीं-किन्हीं पौधों की पत्तियाँ काँटों का रूप धारण करती हैं, जैसेकि बेर और बबूल (कीकर) के पेड़ों में। कई तरह की पत्तियाँ तो चंदा बाग से तोड़ लाई थी। बाकी शकलें पिताजी ने क़ागज़ पर खींचकर दिखलायीं, जिनमें से कुछ यहाँ दिखलायी गयो हैं।



नाना प्रकार की पत्तियाँ

बातें समाप्त करते हुए पिताजी ने कहा—इनके अतिरिक्त ज़मीन के अन्दर वाले तने के पपड़ी, पत्तियाँ तो मैं तुम्हें दिखला ही चुका हूँ। बहुत सी पत्तियाँ तो



मटर का फूल

प्याज का फूल

हरी ही होती हैं पर कुछ दूसरे रंगों की भी मिलती हैं।

22—वनस्पति जीवन (4) फूल

बाग़ में रंग बिरंगे फूल खिल रहे थे जिन पर रंग बिरंगी तितलियाँ मँडरा रही थीं, मधुमक्खियाँ भी एक फूल से दूसरे फूल पर घूँ-घूँ करती हुई जा कर स्वाद लूट रही थीं। चंदा कुछ फूल तोड़ कर उनकी सुगन्ध सूँघती हुई माता जी के पास ले आयी। माता जी बोली—"बेटी! फूलों को नाक के बहुत पास मत ले जाओ। इन में कई छोटे-छोटे भुनगे होंगे जो नाक में घुस जावेंगे।" रवि भी चन्दा के साथ था और कुछ फूल उसके हाथों में भी थे। उसने पूछा—"माता जी, फूलों के इतने सुन्दर रंग क्यों बने हैं?"

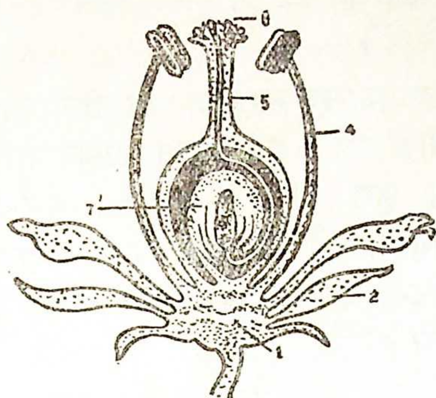
माता जी—परमात्मा ने कोई भी चीज ऐसी नहीं बनाई, जिसका कोई प्रयोजन न हो। तितलियों मधुमक्खियों और भौंरों का मन लुभाने के लिये ये चटकीले तरह-तरह के रंग फूलों को दिये गये हैं। तितलियाँ और मधुमक्खियाँ तथा भौंरे तो इनसे अपना खाना भी प्राप्त करते हैं और उसके बदले फूलों को कुछ दे भी जाते हैं।

चंदा—माता जी, इन बेचारे कीड़ों के पास क्या धरा है, जो वे देंगे?

पिता जी भी आ पहुँचे थे। उन्होंने कहा—"आओ, मैं तुम्हें यह सब अभी बतलाता हूँ। पहले तो फूलों की बनावट देखो।" एक फूल लेकर उन्होंने कहा—"यह जो फूल की डण्डी पर चौड़ा हिस्सा है, जिस पर रंग बिरंगी पत्तियाँ आदि लगी हुई हैं।, इसको पुष्प-आसन कहते हैं। यह जो हरे रंग की पत्तियों का चक्कर है, फूल का सबसे बाहर का हिस्सा है। इन पत्तियों को सेपलें कहते हैं। जब फूल कली की अवस्था में होता है तब इन्हीं सेपलों में सुरक्षित बन्द रहता है। किन्हीं फूलों में ये सेपलें भी रंगदार होते हैं। अच्छा रवि! अब इन सेपलों को तोड़ कर फूल से निकाल लो।

रवि ने एक-एक पत्ती तोड़कर निकाल ली। पिताजी ने कहा—"हरी पत्तियाँ अर्थात् सेपलें जो रवि ने तोड़कर अलग कर दी हैं, वे फूल का पहला अंग हैं। इसके बाद फूल का दूसरा हिस्सा आया, ये रंगदार पत्तियाँ। इन्हें पेटल या पंखड़ी कहते हैं। यह फूल का सबसे सुन्दर भाग है। फूलों की शोभा इन रँगीली पंखड़ियों के कारण ही होती है। तरह-तरह के फूलों की पंखड़ियाँ तरह तरह के रंगों और शकलों की होती हैं। सुगन्धमय फूलों की गन्ध इन्हीं पंखड़ियों से ही आती हैं। इन रंगों का और सुगन्ध का काम मधुमक्खी, तितली और भौंरे जैसे उड़ने वाले कीड़ों अर्थात् पतंगों को रिझाना

और उनको लुभाकर फूल पर बुलाना है।



आकृति 32—पुष्पांग प्रदर्शन। 1—पुष्पासन, 2—सेपलें. 3—पंखड़ियाँ, 4—पराग केसर, 5—गर्भ केसर 6—गर्भ केसर का स्टिग्मा, 7—गर्भ केसर की अंडे दानी।

पिताजी ने एक-एक करके फूल की सारी पंखड़ियाँ तोड़ डालीं। फूल की शोभा जाती रही, पर अब उसके बीचों बीच के भाग दीख पड़े।

पिताजी—फूल और पौधे के लिए ये ही सबसे महत्त्वपूर्ण भाग हैं। यह देखो जो कोमल तारों जैसी डण्डियाँ हैं, जिन पर छोटी-छोटी पीले रंग की गुत्थियाँ या घुंडियाँ लगी हैं, ये फूल का नर भाग है। इन सबको पराग-केसर कहते हैं। इन घुंडियों को यदि ज़रा सा भी हिलाओ तो पीली-पीली धूल निकल आती है। प्रत्येक गुत्थी इस पीली धूल से भरी है। इस धूल को

पराग कहते हैं। जब मधु-मक्खियाँ, तितलियाँ, आदि

फूलों पर बैठती हैं, तब इस धूल के कण उनके पैरों में चिपट जाते हैं।

अच्छा, अब इन तारों को भी तोड़ डालो। तो फूल का चौथा अंग दिखने लगा। इसका नाम है गर्भ केसर। यह फूल का स्त्री-भाग है। गर्भ-केसर का निचला भाग मोटा है और ऊपर का सिरा चौड़ा। ऊपर वाले को स्टिग्मा कहते हैं, नीचे वाले को अंडे दानी। अंडेदानी को काटकर देखो तो छोटे-छोटे बीज से दिखलायी देते हैं। यही बीज बड़े होकर दाने बन जायेंगे। ये हैं कच्चे बीज।

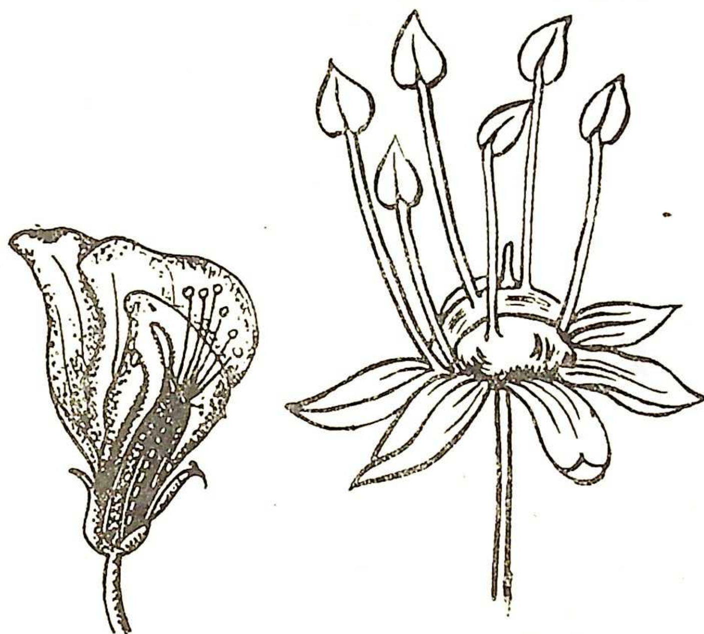
पौधा पतंगों को इसीलिए लुभाता है कि उनके शरीर में लगे हुए पराग कण अंडेदानी में पहुँचें ताकि कच्चे बीज गर्भित होकर पक सकें। पक्के बीजों से ही नये पौधे उग सकते हैं। अंडेदानी आगे चल कर फल बन जाती है।

इस प्रकार देखो कि फूल के चार भाग होते हैं। परन्तु भिन्न-भिन्न फूलों में इनके रंग, रूप आदि अलग अलग होते हैं। उदाहरण के लिए फूल मटर और प्याज़ के फूलों का विस्तार पूर्वक वर्णन करेंगे।

इस फूल मटर के सेपलें पाँच दाँतों वाले प्याले की तरह हैं, जो पाँच पत्तियों से जुड़कर बना है। इसके

भीतर छोटी बड़ी मिलाकर पाँच पंखड़ियाँ हैं। एक पंखड़ी

और सब से बड़ी है। जब फूल कली की अवस्था में होता है तब यही बाकी चारों को ढके रखती है। इस बड़ी पंखड़ी के बीच दो छोटी पंखड़ियां हैं और इनके भी बीच में दो पंखड़ियाँ और हैं जो एक दूसरे से अध-जुड़ी



आकृति33–फूल मटर पुष्पांग प्रदर्शक आकृति34 प्याज़ पुष्पांगप्रदर्शक

हुई सी हैं। इन पंखड़ियों के बीचों-बीच एक नली-सी है जो पराग-केसर के तारों का समझो कि, गुच्छा है। यह गुच्छा एक ओर से खुला है जहाँ एक तार अलग

निकला हुआ है। अंगुलियाँ गिनने से पता चलता है कि

कुल दस डंडियां हैं नौ तो मिली हुई और एक अलग। पराग केसर के बीच में एक गर्भ केसर है, जिसकी फली सी बनी हुई है, जो बड़ी होकर मटर की फली बन जावेगी।

फिर प्याज़ के फूलों का एक गुच्छा लेकर पिताजी ने कहा—देखो बच्चो, इन फूलों में हरी सेपलें कोई नहीं। परन्तु एक-एक फूल में जो सफेद पत्तियां देखते हो यह दो चक्करों में पुष्पासन में लगी हैं। इनके अन्दर देखो, दो ही चक्करों में इन पत्तियों के आमने-सामने पराग-केसर लगे हैं। पराग-केसर के बीच में ऊपर से तो तीन गर्भ-केसर दीख पड़ते हैं, परन्तु तीनों नीचे जाकर मिल गये हैं और अंडेदानी केवल एक ही है।

अंडेदानी को काटकर पिताजी ने दिखलाया कि उसमें तीन खाने हैं और हर एक खाने में दो-दो बीज।

23—वनस्पति-विद्या-वाचस्पति श्रीमान् जगदीश चंद्र बोस

एक दिन पिताजी ने रवि और चन्दा से कहा—वनस्पति संसार के बारे में तुमको बहुत सी बातें बतलायी हैं। आज हम तुम्हें एक वनस्पति-विद्या-विशारद का

वृत्तान्त सुनाते हैं, जिन्होंने कि वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी

अपने अनुसंधानों से न केवल स्वयं यश प्राप्त किया,



श्री मान् जगदीश चन्द्र बोस

अपितु, अपने देश भारतवर्ष को भी आधुनिक विज्ञान के संसार में ऊँचे स्थान पर पहुँचाया। आपका नाम है

श्रीयुत जगदीशचन्द्र बोस।

आपका जन्म 30 नवम्बर सन् 1858 को ढाका नगर के पास एक गाँव में हुआ था। आपके पूज्य पिता का नाम श्री भगवान चन्द्र बोस था। जगदीश के जन्म के समय आप फरीदपुर में डिपुटी कलेक्टर थे। बाल अवस्था से ही जगदीश चन्द्र को प्रत्येक वस्तु के बारे में पूछ-ताछ करने का शौक था; और पिता जी को उनका यह स्वभाव बहुत पसन्द था। पहले पहल तो जगदीश ने अपने गाँव की पाठशाला में ही पढ़ना शुरू किया; फिर आगे पढ़ने के लिए आप कलकत्ते भेज दिये गये, जहाँ के सेंट जेवियर नामक कालेज से आपने कलकत्ता विश्व-विद्यालय की बी० ए० की डिगरी प्राप्त की। इसके बाद और आगे पढ़ने के लिए पिता जी ने आपको इंगलैंड भेज दिया।

सन् 1884 में आपने केम्ब्रिज की सायंस ट्राइपस नामक उच्च परीक्षा में ऊँचे दर्जे में उत्तीर्ण होकर बी०ए० की डिगरी प्राप्त की। अगले वर्ष आप लंडन यूनिवर्सिटी की बी० एस-सी० की परीक्षा पास कर भारत लौट आये। ग्यारह वर्ष बाद, 1896 में लंडन यूनि-वर्सिटी ने आपको डाक्टर आफ़ सायंस, अर्थात् विज्ञान की सर्वोच्च पदवी प्रदान की। भारत वापिस आने पर, सन् 1889 में, आप कलकत्ते के प्रेसिडेन्सी कालेज

नामक सरकारी विद्यालय में भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्त हुए। परन्तु उनको इस पद का पूरा वेतन देना स्वीकृत न हुआ। काम तो आप उतना ही या और अच्छा करें जितना कि अंग्रेज़ आचार्य, परन्तु वेतन उनसे कम ही मिले। इस बात से जगदीश चन्द्र के स्वसम्मान-प्रिय अन्तरात्मा को बड़ा धक्का लगा। आपने पद तो न छोड़ा परन्तु सत्याग्रह के नियमानुसार कम वेतन लेना स्वीकृत न किया।

तीन वर्ष तक आपने वेतन का एक पैसा भी न छुआ। अन्त में कालेज के प्रिंसिपल को इनकी योग्यता, कार्य-कुशलता पर मोहित होकर पूरा वेतन दिलवाना पड़ा, केवल आगे का ही नहीं, पिछले तीन सालों का भी।

इस विजय में विशेष सहायता आपको अपनी पत्नी से मिली थी। आपका विवाह सन् 1887 में हुआ था वेतन न लेने के कारण निर्वाह बड़ी कठिनता से होता था, जिसको श्रीमतीजी ने सहर्ष स्वीकार किया और थोड़े ही में निर्वाह करने में पूरा सहयोग दिया। कलकत्ते के बाहर हुगली नदी के उस पार उन्होंने एक बहुत ही कम किराये का मकान लिया। कालेज जाने के लिए एक छोटी सी नाव रखली जिसे स्वयं खे कर ले जाते थे। श्रीमती जी उसे खेकर वापस ले जाती थीं और कालेज से लौटने के समय फिर घाट पर नाव लाकर मिलती थीं।

बेतार की तारबर्की का नाम तो तुमने सुना ही होगा। प्रतिदिन जिस रेडियो को तुम सुनते हो वह इसी बेतार के तार से चलता है। उन दिनों में इस विषय से सम्बन्ध रखने वाली बहुत सी रहस्यमयी चर्चाएँ निकल रही थीं। बोस महोदय भी इसी काम में लग गये और शीघ्र ही पर्याप्त सफलता प्राप्त करली। अपने ही बनाये हुए यन्त्रों से उन्होंने कलकत्ते के टाउन हाल में, गवर्नर साहब की उपस्थिति में, एक जगह से भेजा हुआ समाचार बिना तार के दूसरी दूर जगह पहुँचा दिया।

बेतार के तार के सम्बन्ध में आपने बड़े ही युक्ति-पूर्ण और सूक्ष्म-ग्राही यन्त्र बनाये थे। उनसे भी अधिक सूक्ष्म-ग्राही आपने एक ऐसा यन्त्र रचा कि जिससे चीज़ों का हिलना डुलना एक करोड़ गुना बढ़ाकर देख सकते हैं और इसलिए अति सूक्ष्म हिलने-डुलने का पता लग सकता है। इस "सूक्ष्म-चाल-लेखक" यन्त्र को उन्होंने पौधिक जीवन के अध्ययन में लगाया और वनस्पति संसार के विषय में बड़ी आश्चर्यजनक परन्तु महत्त्वशाली बातें खोज निकालीं।

इस यन्त्र द्वारा आपने सिद्ध कर दिखलाया कि वन-स्पतियों में भी वैसा ही जीवन है जैसा कि जंतु-जगत में। जिन चीजों को हम जड़ कहते हैं वे भी हमारी तरह सोती और जागती हैं; थक जाती हैं; चंचल होती हैं; नशे

से ग्रस्त हो जाती हैं, जिस से मुरझा और अन्त में मर जाती हैं। पौधे भी मनुष्यों की तरह सुख और दुख अनुभव करते हैं; सर्दी-गर्मी का उन पर भी प्रभाव होता है; उन्हें भी हमारी तरह भूख-प्यास लगती है; वे भी खाते, पीते, जागते, सोते और विश्राम करते हैं।

प्रेसिडेंसी कालेज कलकत्ता में वे छब्बीस वर्ष प्रोफेसर रहे और 1915 में आई० ई० एस० (इंडियन एजुकेशनल सर्विस-भारतीय शिक्षा राज सेवा) से रिटायर हुए अर्थात् पेंशन मिली। परन्तु इससे बहुत पहिले ही उनका ध्यान वनस्पति संसार की ओर झुक चला था और पेंशन लेने के बाद, 1917 में, उन्होंने एक अपनी ही प्रयोगशाला खोली जिसका नाम बोस रिसर्च इंस्टिट्यूट है, अर्थात् बोस जी की अनुसंधान शाला। यहाँ पर उन्होंने अपने "सूक्ष्म चाल लेखक" द्वारा पौधों के बारे में ऊपर लिखी हुई बातें खोज निकालीं। दूर-दूर से विदेशों से भी, बड़े-बड़े विद्वान इस विषय पर उनके व्याख्यान सुनने के लिए आते थे। विदेशी वैज्ञानिक सभाओं से निमंत्रित होकर, युरोप और अमरीका में भी जाकर आपने अपनी खोजों को व्याख्यानों द्वारा समझाया ही नहीं, अपितु प्रयोगों द्वारा दिखला भी दिया। सारे संसार को विदित करा दिया कि आप उन्हीं प्राचीन महर्षियों की सन्तान हैं, जिन्होंने जंगलों के कंद-मूल-फल खाकर ही

प्रकृति के नियमों का ज्ञान प्राप्त किया था और संसार की ज्ञान-विज्ञान की गूढ़ समस्याओं पर उपदेश दिया था।

अनेकों भारतीय तथा विदेशी विश्व-विद्यालयों ने आपको डाक्टर आफ़ सायंस (विज्ञान वाचस्पति) की डिगरी देकर अपने आपको कृतार्थ किया। आपकी विद्-वत्ता और महानुभावता से प्रसन्न होकर अँग्रेजी सरकार ने आपको "सर" की पदवी प्रदान की थी। वैज्ञानिक संसार की सबसे पुरानी और सबसे बड़ी संस्था, लंदन की रायल सोसायटी ने भी आपको अपना सदस्य बना लिया था। सन् 1937 की तेईसवीं नवम्बर के दिन, ७९ वर्ष की आयु में, आप परलोक सिधारे।

24—मक्खी की जन्म कथा

माताजी—बेटी चन्दा! जाली की खिड़की बन्द करदो, नहीं तो अन्दर मक्खियाँ घुस आवेंगी।

रवि—माता जी, मुझे तो मक्खियों से बड़ी घृणा आती है।

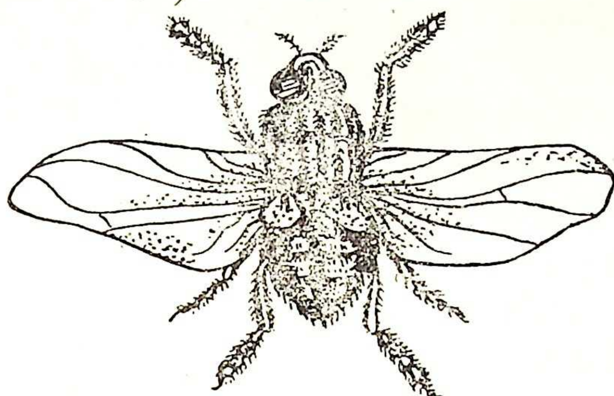
माताजी—हाँ बेटा, ये बड़ी गंदी होती हैं और बहुत सी बीमारियाँ फैलाती हैं। इनसे तो सदैव बच कर ही रहना चाहिये।

चन्दा—ये तो इतनी छोटी हैं, बीमारियाँ कैसे

फैला सकती होंगी ?

माताजी—जितनी छोटी उतनी ही खोटी हैं।

रवि—तब तो इनसे परमात्मा ही बचाये। परन्तु माताजी ये इतनी आती कहाँ से हैं ?



आकृति 35—मक्खी (आकार में बढ़ाकर दिखलायी हुई)

माताजी—लो पिताजी आगये। वे तुमको मक्खियों के जन्म का हाल बतलायेंगे। मुझे रसोई में जाकर काम करना है।

पिताजी—अच्छा, लो सुनो। मैं तुम्हें मक्खियों की जन्म-कथा सुनाता हूँ। हर मादा मक्खी गोबर या गन्दगी पर 110 से लेकर 150 तक अण्डे एक ही बार में देती है।

रवि—तभी मक्खियाँ इतनी अधिक होती हैं।

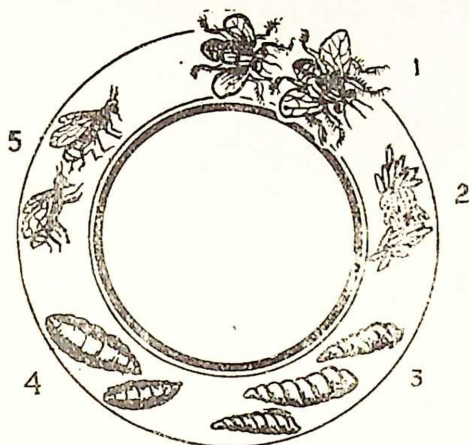
पिताजी—हाँ ! अब आगे सुनो। इन अंडों में से

आठ से चौबीस घंटों के अन्दर छोटी छोटी सफ़ेद सूँडियाँ (सुँडियाँ) सी निकल आती हैं। एक अन्डे से एक। इन सुंडियों की टागें आदि कुछ नहीं होतीं, परन्तु चल फिर सकती हैं। मक्खी ऐसी जगह (गोबर, कूड़ा, गन्दगी आदि) ढूँढ कर अन्डे देती हैं, जहाँ इन सुँडियों के खाने की बहुतायत हो। अन्डे से निकलते ही ये खाना शुरू कर देती हैं। ये बड़ी खाऊ होती हैं। कीड़े की इस अवस्था में दिन-रात खाने के अतिरिक्त और कोइ काम नहीं होता। इस अवस्था में कीड़े को अंग्रेज़ी में लार्वा कहते हैं।

कोई छैः सात दिन ही इनकी यह अवस्था रहती है। इसके बाद ये ऐसी अवस्था में पहुँचते हैं कि इन के चारों ओर एक झिल्ली या पतला पारदर्शक छिलका सा बन जाता है जिसके भीतर कीड़ा, समझो कि बैठा सा रहता है। इस अवस्था में उसका दाना पानी बिलकुल बन्द रहता है। इस अवस्था में कीड़ा प्यूपा कहलाता है। प्यूपा के अर्थ हैं पुतली।

पुतली की हालत में कीड़ा पाँच-सात दिन तक रहता है। इस बीच में खोखले के भीतर ही भीतर कीड़े का रूपांतर होता रहता है। शुरू शुरू में तो वही लार्वा की आकृति, पर पाँच सात दिनके बाद उसकी आकृति धीरे धीरे बदल कर ठीक मक्खी जैसी हो

जाती है। अब झिल्ली फट जाती है और उसके
अन्दर से पूरी, समूची छोटी सी मक्खी निकल आती है। थोड़े ही दिनों में प्रौढ़ होकर यह अण्डे देने या दिलाने लगती हैं।



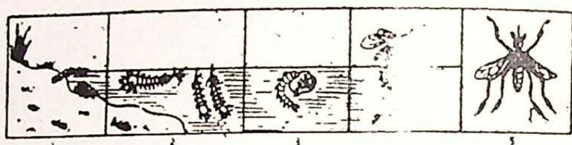
आकृति 36—मक्खी का जीवन चक्र। 1—प्रौढ़ मक्खियाँ, 2—अण्डे, 3—लार्वा, 4—पुतलियाँ, 5—बच्चा मक्खियाँ।

चंदा—आहा! क्या ही विचित्र जन्म कथा है। मैं तो समझती थी कि जैसे गाय के बछड़ा होता है, वैसे ही मक्खी भी मक्खी के बच्चे को जन्म देती होगी।

पिता जी—नहीं बेटा! कीट संसार में अर्थात् कीड़ों की दुनियाँ में प्रत्येक कीड़ा इन तीन अवस्थाओं में से होकर ही माता पिता की आकृति का कीड़ा बनता है, अर्थात् अण्डा, लार्वा और पुतली जैसी दशा। पिताजी

ने मक्खी का जीवन चक्र खींच कर दिखलाया [आकृति ३६] और कहा—

ये जो शक्लें मैंने बनायी हैं वे वास्तविक आकार से बहुत ही बड़ी हैं। मच्छर की जन्म कथा भी देखो तुमको खींच कर दिखलाता हूँ। [आकृति ३७]



आकृति 37—मच्छड़ का जन्म। 1—अण्डे, 2—झिनगे (दो प्रकार के), 3—पुतली, 4—बच्चा मच्छड़, 5—प्रौढ़ मच्छड़।

देखो कि मच्छड़ तथा अन्यान्य कई तरह के कीड़ों [जैसे तितली] की लार्वा अवस्था सूँडिका अर्थात् छोटी छोटी सूँडों के रूप की नहीं होती, किन्तु वे अनेक पैरों वाले कीड़े से ही जान पड़ते हैं। इनको झिनगा कहते हैं। परन्तु चाहे सुण्डियों के रूप में हों चाहे झिनगा के, सभी लार्वा बड़े खाऊ होते हैं। पुतली दशा में उनका खाना-पीना बिल्कुल बन्द रहता है. केवल झिल्ली के भीतर हीं भीतर रूपान्तर मात्र होता रहता है।

रवि—पिता जी, यदि कहीं सारे अन्डे ठीक निकल आयें तब तो सम्भवतः एक ही वर्ष के अन्दर सारी दुनियाँ मक्खियों से ही भर जाय।

पिताजी—हाँ बेटा! परन्तु ईश्वर के काम ऐसे अनियमित नहीं होते। सौ डेढ़ सौ अंडे जो मक्खी एक ही बार में देती है, उनमें से हर एक से मक्खी नहीं बन पाती। कई अंडे खराब निकल जाते हैं, कुछ और अंडों को या उनसे निकले हुए लार्वादिकों को किसी न किसी हालत में जीव-जंतु खा जाते हैं, कइयों को पूरा खाना नहीं मिलता, कई और कारणों से मर जाते हैं। सारांश यह कि जितने अंडे मक्खी देती है, उनमें से कुछ ही मक्खी बनते हैं और इनमें से भी कुछ नर मक्खी होते हैं जो अंडे नहीं देते।

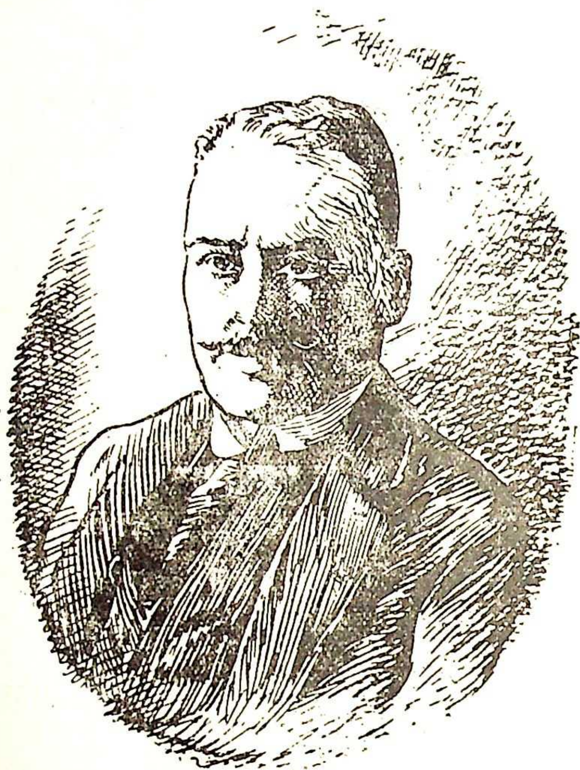
25—मलेरिया-महामारीमर्म-उद्घाटक श्री मान् रॉनल्ड रॉस

पिता जी—जानती हो चंदा, मलेरिया क्या है?

चंदा—जी हाँ, जूड़ी बुखार की बीमारी।

पिता जी—ठीक। इस बीमारी में प्रायः जाड़ा लग कर बुखार चढ़ता है। इस बीमारी से लाखों आदमी हमारे देश में प्रति वर्ष पीड़ित होते हैं और इसके कारण हजारों की मृत्यु भी हो जाती है। इसलिए इसको महा-मारी कहते हैं। आज हम तुम दोनों को एक ऐसे महानुभाव की जीवन कथा सुनाते हैं, जिन्होंने इस

बीमारी के मर्म, अर्थात रहस्य (छिपी बात) को खोज निकाला कि इस बीमारी का मूल कारण क्या है। जब जड़ का पता चल जाय तब उसको उखाड़ भी सकते हैं।



श्रीमान् रॉनल्ड रॉस

मलेरिया महामारी से छुटकारा पाने के लिए हमको एक अंग्रेज महोदय का विशेष कृतज्ञ होना चाहिए।

आप का नाम रॉनल्ड रॉस था। आपका जन्म हमारे ही

देश, भारतवर्ष में, मई सन् 1875 ई० में हुआ था और 18 सितम्बर 1932 के दिन इंगलिस्तान में इनकी मृत्यु हुई। एक और स्वाभिमान की बात रास साहब के बारे में यह है कि वे इसी देश की इण्डियन मेडिकल सर्विस (आई० एम० एस०) अर्थात् भारतीय चिकित्सा राज सेवा में चौबीस वर्ष की आयु में प्रविष्ट हुए और इस प्रकार मलेरिया के मूल की खोज के वर्णन में हमारे देश का भी नाम आता है।

इस राज-सेवा से रिटायर होने के बाद आप अपने देश लौट गये और वहां कई एक अस्पतालों और चिकित्सा कालेजों से आपका सम्बन्ध रहा। अंग्रेजी सरकार ने आपको "सर" की पदवी प्रदान की थी और 1902 में आपको नोबल प्राइज़ नामक पारितोषिक मिला। यह पारितोषिक कोई एक लाख रुपयों का है और हर वर्ष संसार भर के दो तीन मुख्य, सर्वश्रेष्ठ, विद्वानों और महानुभावों को ही मिलता है। मलेरिया के मूल कारण की खोज में सफलता प्राप्त करने के लिए रास साहब संसार में मानवजाति के परमोपकारी पुण्यात्मा पुरुषाओं की श्रेणी में गिने जाते हैं।

मलेरिया के मूल कारण की खोज और इस बीमारी से बचने के उपायों की कहानी बड़ी ही मनोरंजक है;

इसलिए इसको शुरू से ही कहता हूँ; सुनो।

अफ़रीका के पश्चिमोत्तरी कोने में अलजीरिया नामक एक देश है जो फ्रांस के अधीन है। यहां फ्रांसीसी सेना में लावरन नामक एक सर्जन अर्थात् चीड़-फाड़ के डाक्टर थे। छैः नवम्बर सन् 1880 ई० के दिन आपने मलेरिया बीमारी से पीड़ित एक रोगी के खून की एक बूँद की सुक्ष्म-दर्शक यंत्र से परीक्षा की। उन्होंने देखा कि उस खून की बूँद में बहुत छोटे-छोटे जीते हुए ऐसे कीड़े थे जैसे कि इसके पहले किसी ने भी नहीं देखे थे। इस बात के सम्बन्ध में और अधिक काम करने से पता चला कि इसी तरह के कीड़े मलेरिया से पीड़ित सभी रोगियों के खून में होते हैं; पर जिनको मलेरिया नहीं उनके खून में नहीं। इसलिए यह परिणाम निकाला गया कि ये कीड़े ही मलेरिया की जड़ हैं और इस लिए इनका नाम रखा गया, "मलेरिया पैरासाइट"। पैरासाइट उस जीव (जंतु या पौधे) को कहते हैं जो दूसरे जीवित जानवरों या पौधों पर, उन्हीं का रस पी कर, अपना जीवन बिताते हैं; एक तरह के मुफ्तखोर, पर-जीवी।

इस छानबीन की दूसरी पैड़ी थी यह खोज निकालना कि ये परजीवी बीमार के खून में कैसे पहुँचे। प्रस्तुत विषय में यही एक विशेष, सबसे महत्त्वपूर्ण, खोज

थी और इसमें सफलता सर रॉनल्ड रॉस को प्राप्त हुई।

सन् 1855 में, जब कि आप भारत ही में काम कर रहे थे, रास साहब ने खोज निकाला कि जब एक विशेष प्रकार का मच्छड़ मलेरिया से पीड़ित रोगी को काट कर खून चूसता है, तब मलेरिया के परजीवी उस मच्छड़ के पेट में जाते हैं और वहाँ अपना डेरा जमा लेते हैं। यहाँ पर उनमें कुछ परिवर्तन होते हैं और अन्त में वे मच्छड़ की थूक की थैलियों में जा पहुँचते हैं। मच्छड़ में तो मलेरिया-परजीवी कोई बीमारी पैदा नहीं करते परन्तु जब कि ऐसा मच्छड़ किसी आदमी को काटता है तो उसके काटने का, थूक से भरा, औजार स्वभावतः उन परजीवी मलेरिया के "कीड़ों" को आदमी के खून के अन्दर पहुँचा देता है और इसके बाद यदि आदमी के खून में इन कीड़ों को मारने की पर्याप्त शक्ति न हुई तो सको शीघ्र ही जूड़ी बुखार हो जाता है।

रवि—पिता जी, क्या सब मच्छड़ एक ही तरह के नहीं होते ?

पिता जी—नहीं बेटा! जैसे और प्राणियों में वैसे ही मच्छड़ों में भी कई तरह के मच्छड़ होते हैं। परन्तु केवल एक ही जाति के मच्छड़ की मादा के काटने से ही मलेरिया फैल सकता है। (नर मच्छड़ खून नहीं चूसते अर्थात् नहीं काटते, वे केवल पुष्पादिकों का रस

ही चूसते हैं।

जिस किसी को मलेरिया हो जाय उसको तो इलाज कराना ही पड़ता है; परन्तु यदि मच्छड़ों का ही विनाश कर दिया जाय तो मलेरिया फैल ही न सके। अंग्रेजी में एक कहावत है, जिसका मतलब है कि "इलाज से बचाव अच्छा है।" यदि मच्छड़ ही न रहें तो मलेरिया ही न हो। न रहा बाँस न बजी बाँसुरी।

आज कल कई एक ऐसी दवाइयाँ मालूम हो गयीं हैं जिनके छिड़कने से मच्छड़, मक्खी, और ऐसे छोटे-छोटे कीड़े सब मुरझा कर अन्त में मर जाते हैं। कमरों के दरवाजों, खिड़कियों, रोशनदानों को ठीक तरह से लोहे के तारों से बनी हुई महीन जाली से मढ़कर रखने से मच्छड़ बाहर से भीतर आ ही नहीं सकते। पलँगों पर, विशेषतः यदि बाहर सोना हो तो, जाली की मसेहरी लगा कर सोना चाहिए।

इन विधियों से तो मच्छड़ अपने पास पहुँचने से रोके जा सकते हैं। परन्तु सबसे अच्छी विधि तो यही होगी कि मच्छड़ों को पैदा ही न होने दें या पैदा होते ही मार डालें। मच्छड़ों के अण्डे देने का उपयुक्त स्थान पानी है। यदि पानी की सतह पर एक पतला सा मिट्टी के तेल का परत पड़ा हो तो इसको फोड़ कर मच्छड़ का भिनगा ऊपर अपनी "नाक" नहीं निकाल सकता, और

बिना साँस लिए जीवित नहीं रह सकता।

इस प्रकार और साथ ही सब जगह व कीड़ा-मार दवाइयाँ छिड़क कर (आज कल, एरोप्लेनों द्वारा ऊपर से "वर्षा" कर) शहर के शहर मच्छड़, मक्खी विहीन किये जा सकते हैं। इन रीतियों द्वारा नई दिल्ली में एक भी मच्छड़ नहीं रहने पाया था और न ही बहुत मक्खियाँ।

26—छूत की बीमारियाँ

सभी नहीं, परन्तु बहुत-सी बीमारियाँ रोगाणुओं द्वारा होती हैं। रोगाणु जन्य सभी बीमारियाँ छूत से होती हैं। छूत दो प्रकार की होती है। एक हवा-छूत, दूसरी छुआ-छूत।

किन्हीं-किन्हीं बीमारियों में रोगी का साँस रोगाणुओं से भरा होता है, और इस प्रकार रोगाणु हवा में फैल जाते हैं और स्वस्थ मनुष्य ऐसी हवा में साँस लेने से रोगग्रस्त हो सकता है। रोगी जो मल-विसर्जन करता है, अर्थात् थूक, पसीना, मूत्र, विष्ठा आदि उसमें भी रोगाणु होते हैं, जो हवा के झोकों से उड़ाये जा सकते हैं और इस प्रकार हवा में फैल कर दूसरों को रोगी बना सकते हैं। यह हुई हवा-छूत।

कोई-कोई बीमारियाँ ऐसी हैं, जो रोगी को केवल छूने से ही हो जाती हैं। छूने से रोगी के रोगाणु छूने वाले के शरीर में लग जाते हैं और यदि शरीर के अन्दर अर्थात् खून में पहुँच गए तो छूने वाले को भी वही रोग हो सकता है। ऐसे रोग छूआ-छूत के रोग हुए।

पहले ही बतला चुके हैं कि रोगाणु शरीर में तीन ही प्रकार पहुँच सकते हैं। या तो साँस से या खाने-पीने के साथ, और या कटी हुई खाल से सीधे खून में। हवा-छूत की बीमारियाँ तो केवल एक ही विधि से शरीर में पहुँच सकती हैं केवल साँस द्वारा। छूआ-छूत की बीमारियाँ अधिकतर पिछली दो प्रकार से ही।

रोगी के शरीर या घावों आदि को छू कर यदि कहीं छूने वाले का हाथ आदि मुँह में लग जाय या आँख या नाक में, या यदि छूने वाले के शरीर की खाल कहीं से छिली या कटी हुई हो और वहाँ हाथ लग जाय, तो रोगाणु शरीर के अन्दर पहुँच जाते हैं और छूने वाले को भी रोगी कर सकते हैं। इसीलिए बीमार को देख-दाख कर डाक्टर साहब सदैव अपने हाथ साबुन लगा कर अच्छी तरह से धो डालते हैं। सभी लोगों को ऐसा करना चाहिए, विशेषतः उन रोगियों के छूने के बाद जिनको छुआछूत की बीमारी है या किसी भी रोगी के मल मूत्रादि में अकस्मात् हाथ लग जाने के बाद। इस प्रकार

केवल अपने ही बचाव के लिये नहीं, दूसरों के बचाव के लिए भी हाथ आदि धोने चाहिएँ; क्योंकि रोगी को छूने के बाद यदि छूने वाला किसी दूसरे को छुए तो दूसरे को भी छूत लग सकती है।

पिताजी यह सब रवि और चंदा को बतला रहे थे। रवि ने पूछा, "पिताजी, मच्छर कैसे मलेरिया फैलाता है, यह तो आपने उस दिन बतलाया था, पर मक्खियाँ कैसे बीमारियाँ फैलाती हैं।

पिताजी—मक्खी रोगी के मलों पर अर्थात् उसके थूक, पसीने, उलटी, मूत्र, विष्ठा आदि पर या कूड़ा-कर-कट, मैले के ढेर पर, जब बैठती हैं तब उसके पैरों, पंखों तथा शरीर के अन्य अंगों में रोगाणु लग जाते हैं और जब वहाँ से उड़ कर किसी खाने पीने की चीज़ पर बैठती है तब इन रोगाणुओं की छूत खाने में लग जाती है, अर्थात् मक्खी के शरीर पर लगे हुए रोगाणु खाने पर पहुँच जाते हैं।

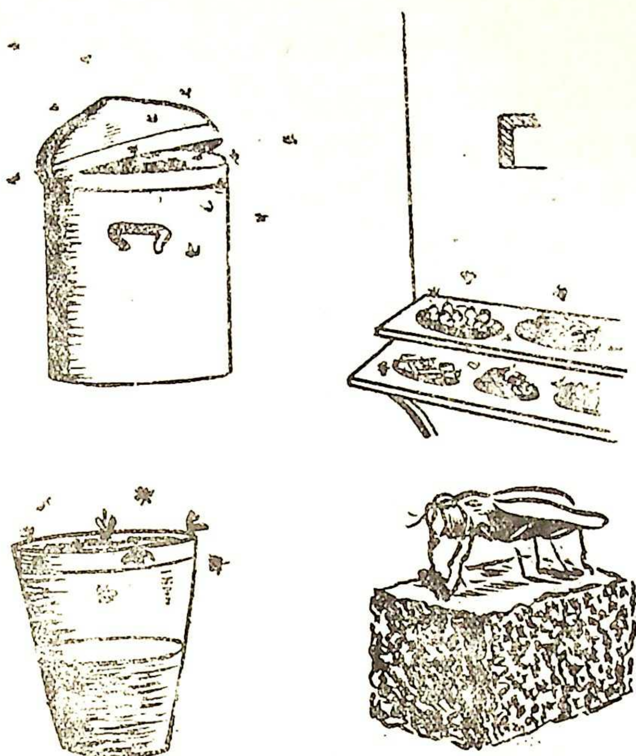
पीने की चीज़, जैसे शरबत या दूध पर तो मक्खी नहीं बैठ सकती। यदि अकस्मात् उसमें गिर जाय तो डूब कर मर जाती है और मक्खी के शरीर पर के रोगाणु दूध आदि में पहुँच जाते हैं। इसलिए इस तरह का पानी दूध आदि कभी न पीना चाहिए—मक्खी निकाल कर भी नहीं। परन्तु पीने की चीज़ों में मक्खी

के शरीर पर के रोगाणु अधिकतर तो इस प्रकार पहुँचते हैं कि मक्खी जब बरतन पर लगा हुआ दूध आदि चाटने के लिए बैठती है तब रोगाणु उसके शरीर से बरतन में लगे हुए दूध में जा पहुँचते हैं। जब यहाँ से दूध गुजरता है, या तो पीते समय या दूसरे बरतन में डालते समय या छलक कर, तब सारे दूध में रोगाणुओं की छूत आ जाती है।

परन्तु एक दूसरी विधि से भी रोगाणु मक्खी से खाने पर पहुँचते हैं। मैले आदि पर मक्खी केवल बैठने के सुख के लिए नहीं बैठती, उसको वह चाट कर खाती भी है, और इस तरह मक्खी के पेट में रोगाणु पहुँच जाते हैं। मक्खी को तो इस कारण कोई रोग नहीं होता, परन्तु मक्खियों में एक बड़ी गन्दी आदत है। जब मक्खी खाने पर चाटने के लिए बैठती है तब चाटने के पहले जो कुछ पहले पेट में था उसको उगल देती है। यह इसलिए कि एक तो पेट खाली हो जाय, जिसमें नया खाना भरा जा सके और दूसरे इसलिए कि यदि खाना ज़रा सख़्त हुआ तो उगले हुए द्रव में घुल कर मक्खी के चाटने योग्य हो जाय। इस प्रकार मक्खी के पेट में जो रोगाणु पहुँचे हुए थे, वे खाने में जा मिलते हैं।

पिताजी ने एक चित्र निकाल कर बच्चों को दिखलाया कि किस प्रकार मक्खियाँ खाने-पीने की

चीज़ों को गंदा कर देती हैं।—(आ० ३८)



आकृति 38—मक्खियाँ कैसे खाना भ्रष्ट करती हैं। दाहिने निचले कोने में मक्खी खाँड के डले पर बैठी हैं और चाटने के पहले उलटी कर दी है।

चंदा—अख, कैसी गंदी घिनौनी आदत है! कोई अचरज की बात नहीं कि मक्खियों से इतनी घिन

लगती है।

27—विविध छूत रोग

माताजी पास ही बैठी थीं। उन्होंने कहा—इसीलिए तो मक्खियों को जहाँ तक हो सके घर में आने ही न दिया जाय। एक तो मैला कूड़ा-करकट घरों से दूर फेंकना चाहिए। यदि घर के पास ही रखना पड़े तो एक ढकने वाले डोल या पीपे में रखना चाहिए। दूसरे, कमरों के दरवाज़ों, खिड़कियों, रोशनदानों, में जाली मढ़ी होनी चाहिए। तीसरे, खाना, दूध, आदि ढक कर रखना चाहिए। चौथे, बाज़ार में मिठाई फल आदि खुले हुए नहीं रखना चाहिए।

हैज़े जैसी बीमारियों के दिनों में तो बाज़ार में खुली रक्खी हुई मिठाई आदि खानी ही न चाहिए। सभी दिनों में विशेषतः हैज़े के दिनों में, जो कुछ भी फल, सब्ज़ी आदि खाने की चीज़ें हों उनको लाल दवाई के पानी में देर तक भिगो कर फिर धो कर काम में लाना चाहिए। लाल दवाई जीवाणुओं को मार डालती है।*

गरम खाना खाना चाहिए। पानी उबाल कर पीना चाहिए। बतला चुके हैं कि पानी उबालने से जीवाणु

---

*लाल दवाई और कुछ नहीं केवल पोटैशियम परमैंगनेट नामक एक रासायनिक पदार्थ का पानी में घोल है।

मर जाते हैं।

जिन नालियों में रोगी का मल-मूत्रादि जाता हो उनमें फिनाइल या चूना जैसी कीट-जीवाणु-घातक चीज़ डाल देनी चाहिये ताकि हैजे जैसे रोग फैल हो न सकें। परन्तु अच्छा तो यह हो कि रोगी का मल मूत्रादि नालियों में जाने ही न पावे। फिनाइल या चूना डाल कर, उनको जमीन में गाड़ देना चाहिए। रोगी की सेवा करने के बाद, हाथ अच्छी तरह से साबुन लगा कर, धो डालने चाहिए।

पिताजी——परन्तु सभी लोग तो यह नहीं कर सकते। इसलिए हैजा या और कोई भी महामारी जब फैले तब उनसे बचे रहने की अच्छी विधि यह है कि उन बीमारियों का टीका लगवा लिया जाय। टीका लगाने से खून में ऐसी शक्ति सी आ जाती है कि यदि रोगाणु शरीर में पहुँच भी जायं तो ताकतवर खून उनको मार डालता है।

परन्तु हर एक बीमारी के अलग-अलग टीके होते हैं। इसलिए सबसे अच्छी बात तो यह है कि खून में अपने आप काफी शक्ति हो कि सब प्रकार के रोगाणुओं को वश में कर सके। रोगाणुओं के रोग तभी रोगी

बना सकते हैं जब कि खून में इनको मार डालने की

शक्ति न रहे। ऐसी शक्ति वाला खून स्वस्थ आदमी में होता है। पहले भी बतला चुके हैं परन्तु फिर से सुन लो कि स्वस्थ रहने के लिए एक तो खुराक ठीक होनी चाहिए, न बहुत अधिक न कम और खुराक के छहों अंश ठीक-ठीक मात्रा में होने चाहिएँ। और दूसरे प्रतिदिन कुछ न कुछ व्यायाम, जैसे, खेल-कूद, टहलना आदि अवश्य करना चाहिए।

एक बात और सदा के लिये याद रखना। खाने से पहले सदैव अच्छी प्रकार से हाथ और मुँह भी धो लेने चाहिएँ। गंदे हाथों से खाना खाने में एक तो घिन प्रतीत होती है, दूसरे हाथ मुँह सदैव खुले रहते हैं, न जाने कितने रोगाणु बैठ गए हों। पानी से धोने से ये सब निकल जाते हैं। खाने के बाद हाथ तो धोना ही पड़ता है, मुँह भी अच्छी तरह कुल्ले करके साफ़ करना चाहिए जिससे मुंह बिल्कुल साफ़ हो जाय। खाने की कोई चीज़ यदि दाँतों के बीच अटकी रह जाय तो देर तक रहने से दाँतों और मसूड़ों को खराब कर देती है। तुमको याद होगा कि खूब चबा-चबा कर क्यों खाना चाहिए। इसलिए अति आवश्यक है कि दाँतों में कोई ख़राबी न होने पावे।

चंदा—पर पिता जी, हैजे से बीमार को होता क्या है ?

पिता जी—हैजे के रोगी के पेट में दर्द होता है; सफेद रंग के दस्त आने लगते हैं; उल्टियाँ भी होती हैं। यदि ठीक समय पर इलाज न हो तो रोगी बड़ी जल्दी ही मर जाता है।

रवि—और कौन-कौन सी बीमारियाँ मक्खियाँ फैलाती हैं ?

पिता जी—और जो बीमारियाँ मक्खियों से फैलती हैं वे भी अधिकतर पेट की बीमारियाँ हैं जैसे कि पेट चलना, अर्थात् दस्त आना, पेचिश और टाइफाइड ।

पेचिश में भी पेट में दर्द होता है। बार-बार टट्टी जाने को जी करता है। टट्टी थोड़ी सी और लसदार होती है। इसको आँव कहते हैं। बीमारी अधिक बढ़ जाने से आँव में खून भी आता है।

टाइफाइड आँतों की बीमारी है। आँतों में घाव हो जाते हैं जिससे रोगी को बुखार हो जाता है। कोई तीन सप्ताह तक इस बीमारी का दौरा रहता है। इसलिए इसको मियादी बुखार कहते हैं।

चंदा—पिता जी, चेचक और खसरा में क्या भेद है?

पिता जी—चेचक में शरीर पर छोटे-छोटे दाने से निकल आते हैं, बुखार भी हो आता है। दोनों में पीप भी पड़ जाती है। यदि रोग जोर का हुआ तो सारा शरीर इन दानों से भर जाता है और बीमारी के बाद भी दाग रह जाते हैं जो जन्म-भर नहीं मिटते। चेचक से बचे रहने के लिए बच्चा जब कुछ ही महीने का होता है तभी टीका लगवा देना चाहिए।

चेचक तो बड़े छोटे सभी को हो सकती है; खसरा अधिकतर बच्चों को ही होता है। इसमें शरीर पर बहुत सी छोटी-छोटी फुन्सियाँ पास-पास निकल आती हैं, जिससे शरीर लाल हो जाता है। बुखार भी हो जाता है।

चंदा—और पिता जी प्लेग क्या है और कैसे हो जाती है ?

पिता जी—वास्तव में प्लेग चूहों की बीमारी है। जैसे बच्चो को खसरा हो जाता है, वैसे ही चूहों को प्लेग। जब चूहे को प्लेग होती तब है वह बिल से बाहर निकल आता है और थोड़ी देर में मर जाता है। चूहों के रोओं में पिस्सू रहते हैं। जब ये पिस्सू रोगी चूहे का खून चूसते

हैं तब प्लेग के रोगाणु पिस्सू के पेट में पहुँचते हैं और वहाँ से उसकी थूक में। मृत चूहे को कोई आदमी हाथ या पैर से छुए या उसके पास से जावे तो ये पिस्सू कूद कर छूने वाले या पास से जाने वाले के शरीर पर पहुँच कर उसको काटते हैं और इस तरह प्लेग आदमी को हो जाती है। पिस्सू एक फ़ुट से अधिक नहीं उछल सकता; इसलिए प्लेग से मरे चूहे पर मिट्टी का तेल या फ़िनाइल डाल कर, दूर से उठा कर, जला देना चाहिए।

प्लेग से पीड़ित रोगी को पहले तो एक गिल्टी निकलती है, गले में, बग़ल में या जाँघ में। फिर ज़ोर का बुख़ार होता है और प्रायः प्लेग पीड़ित मनुष्य बचता नहीं। इससे बचे रहने के लिए प्लेग का टीका लगवा लेना चाहिए।

ज़ुकाम भी रोगाणुओं द्वारा होता है। स्वयं तो भयावह नहीं, परन्तु बढ़ कर बुख़ार, खाँसी, निमोनिया पैदा कर सकता है। ज़ुकाम से बचे रहने का एकमात्र उपाय सुस्वस्थ रहना है। सुस्वस्थता के नियम बतलाये जा चुके हैं।

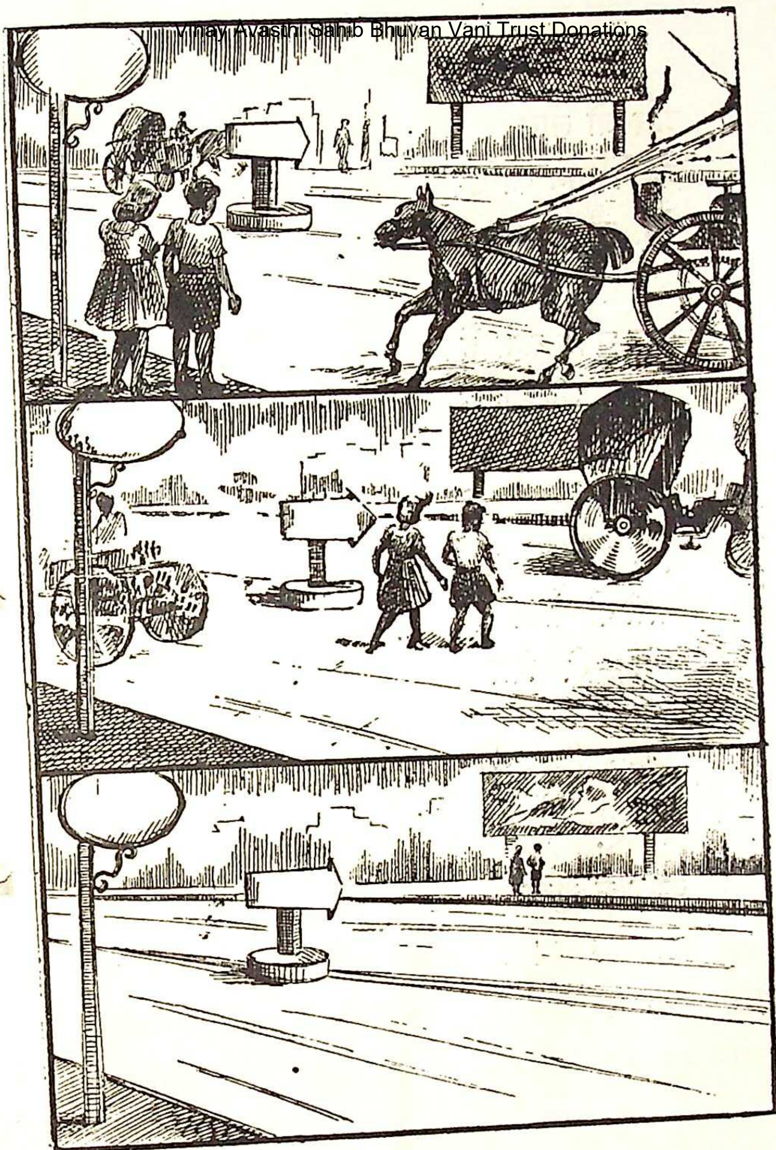
28—थूकना मना है

रवि—पिता जी, सड़कों के इधर उधर तख्तों पर या दीवारों पर जो विज्ञापन आदि चिपके रहते हैं, उनका क्या कोई विशेष नाम है ?

पिता जी—हाँ बेटा, उनको सूचना-पत्र (अंग्रेजी में पोस्टर) कहते हैं। क्यों ?

रवि—शहर में सड़कों के इधर-उधर, जगह-जगह दीवारों पर, या लैंपों के खम्भों पर, लकड़ी के टुकड़ों पर लिखा हुआ है, " थूकना मना है "; 'थूकने की सख्त मनाही है'; "थूकने वाले पर जुरमाना किया जायगा।" क्या थूकना ऐसी बुरी चीज़ है।

पिता जी—हाँ बेटा ! यदि सभी लोग सड़क पर थूकने लगें तो कैसा बुरा प्रतीत होगा ? कितनी गंदगी फैलेगी ? इसके अतिरिक्त थूक में रोगाणु हो सकते हैं। एक बड़ी बुरी बीमारी है, तपेदिक। यह फेफड़ों की बीमारी है। फेफड़ों में घाव से हो जाते हैं। खाँसी आने लगती है। बुखार रहता है। और यदि ठीक से इलाज न किया जाय, तो रोगी की मृत्यु हा जाती है। ऐसे



रोगी के थूक में इस बीमारी के रोगाणु रहते हैं। यदि उसकी थूक सड़कों पर पड़े, तो ये रोगाणु हवा में मिल जाते हैं। और जो लोग इस हवा में साँस लेते हैं, उनको भी तपेदिक हो जाने का डर रहता है।

रोग जब शुरू होता है तब बुखार बहुत ही कम होता है। हल्का सा ज्वर जिसकी लोग परवाह नहीं करते और बाहर घूमते रहते हैं। जब रोग अधिक बढ़ जाता है, तभी ज्वर भी अधिक होने लगता है और तब तो बिस्तर की शरण अवश्य लेनी पड़ती है। सभी देशों में ऐसे बहुत से लोग हैं जिनको इस बीमारी की छूत तो लग गई है पर अभी बढ़ी नहीं है। ऐसे लोगों की थूक इस बीमारी को फैलाती है।

चन्दा—तो फिर यदि आदमी थूकना चाहे तो कहाँ थूके ?

पिता जी—लोगों को सदैव एक रूमाल या अंगोछा रखना चाहिए, खुला हुआ नहीं; पर जेब में या जेब न हो तो कमर से खुसा हुआ, कोट या कुर्ते के नीचे ताकि बाहर न दिख सके। यदि थूकना ही हो तो इसी में थूकना चाहिए और थूक कर थूकी हुई जगह को मोड़ मरोड़ कर, रूमाल फिर अपनी जगह रख देना चाहिए।

परन्तु वास्तव में थूकना तो एक आदत ही है। ऐसी ही आदत क्यों न डाल लें कि थूकना ही न पड़े।

चन्दा—पर रूमाल में थूकना और उस गंदे रूमाल को फिर जेब में रख लेना कितनी गंदी सी बात मालूम होती है।

रवि—क्यों ? रूमाल में नाक छिनक कर जेब में नहीं रख लेती ? जैसी थूक घिनौनी वैसी ही नाक।

पिता जी—बहुत ठीक बेटा ! नाक को बाहर ही छिनकने की भी हमारे देशवासियों में बड़ी बुरी आदत है। नाक भी सदैव रूमाल में ही छिनकनी चाहिए या ऐसी जगह जहाँ लोग न गुज़रें या न देखें।

यह कह कर, पिता जी ने रवि से पूछा, "रवि, और कोई सूचना-पत्र या सूचना-तख़्तियाँ नहीं देखीं ?"

रवि—हाँ, पिता जी ! जगह-जगह तख़्तियों पर वहीं लिखा है जो बहुत दिन हुए आपने बतलाया था कि "बाईं ओर चलो।"

पिता जी—वह तो दो तीन साल की पुरानी बात है और तुमने खूब याद रक्खी। मालूम होता है कि उस समय जो बात कही थी वह तुम्हारे मन में बैठ गयी और तुम सड़क के नियमों पर आचरण करते हो।

रवि—जी हाँ, पिता जी ! केवल यही नहीं कि चलते समय जहाँ तक हो सके सदैव सड़क की बाईं ओर ही चलता हूँ; सड़क जब पार करनी होती है तब इधर-उधर देख लेता हूँ और तभी दूसरी ओर जाता हूँ जब कि समझ लेता हूँ कि इधर-उधर से आते हुए लोग या गाड़ियाँ मुझ तक न पहुँच सकेंगी।

चन्दा—और मैं भी ऐसा ही करती हूँ।

पिता जी—इस प्रकार की और भी बहुत सी सूचना पट्टियाँ या तख्ते सड़कों के पास दीवालों पर या लकड़ी के खम्भों द्वारा जनता के आदेश, या ज्ञान-वृद्धि के लिए टँगे या गड़े होते हैं। तुमको सम्भवतः स्वास्थ्य पत्रों के बारे में भी मालूम होगा ?

रवि—पिता जी, स्कूल में सब लड़कों के स्वास्थ्य की जाँच पड़ताल होती है। एक डाक्टर साहब आते हैं और हर एक लड़के का नाम, उसकी ऊँचाई और छाती का नाप, उसका बोझ कितना है, उसके गले का क्या हाल है, यह सब एक काग़ज पर दर्ज कर लेते हैं। दूर पर टँगे हुए छोटे, बड़े अक्षर भी पढ़वाते हैं और कौन कितनी लकीरें पढ़ सकता है यह भी उसी काग़ज़ पर लिख लेते हैं। क्या इसी को स्वास्थ्य-पत्र कहते हैं ?

पिता जी—हाँ बेटा, अंग्रेज़ी में इसको हेल्थ कार्ड कहते हैं। हेल्थ का अर्थ है स्वास्थ्य, सेहत।

29—टेंपरेचर और थर्मामीटर

चन्दा—माता जी, आप अभी तक क्यों सो रहीं हैं? बुख़ार सा मालूम होता है। ज़रा पिता जी से कहो, देखें तो कितना बुख़ार है।

चन्दा पिता जी को बुला लायी। रवि भी साथ आ गया। पिता जी ने रवि से कहा, "बेटा, जरा थर्मामीटर तो ले आना। देखूँ तो तुम्हारी माता जी को कितना बुख़ार है।"

रवि थर्मामीटर उठा लाया और पूछने लगा, "पिता जी, थर्मामीटर कैसे लगाते हैं और उससे बुख़ार कैसे जाना जाता है?" पिता जी ने खाने से थर्मामीटर निकालते हुए कहा—

थर्मामीटर में देखो एक सिरे पर तो सफ़ेद पारा दीखता है जो पतले शीशे के नल में भरा है। यह एक मोटी शीशे की नली से जुड़ा हुआ है, जिसमें एक पतली

खोखली खाली जगह है। यहीं पर देखो चिन्ह लगे हुए

हैं। थर्मामीटर लगाने के पहले अच्छी तरह से धो लेते हैं। परन्तु सावधानी से धोना चाहिए क्योंकि पारे से भरे सिरे का शीशा बहुत ही पतला है। धोने के बाद, मोटी नली को पकड़ कर, पारे वाले सिरे को नीचे कर दो तीन बार झटक देते हैं। फिर पारे वाले सिरे को मुँह के अन्दर जीभ के नीचे दो मिनट के लिए रख देते हैं। अब निकाल कर देखने से ज्ञात हो जाता है कि कितना बुखार है।

यह तो हुई लगाने की विधि। परन्तु अब मैं तुम्हें यह बताता हूँ कि टेंपरेचर क्या होता है और थर्मामीटर से कैसे नापा जा सकता है।

टेंपरेचर शरीर की या और किसी चीज़ की गर्मी के दर्जे का सूचक है। अर्थात गर्मी का दर्जा बतलाता है, उसकी नाप है। किसी भी भले चंगे आदमी, औरत, या बच्चे के शरीर में इतनी गर्मी होनी चाहिए कि उसका टेंपरेचर अट्ठानवे बिन्दु चार (98·4) हो।

चंदा—पिता जी, यह बिन्दु चार क्या हुआ?

पिताजी—गर्मी की नाप के दर्जे होते हैं—एक,





आकृति 39—साधारण थर्मामीटर। आकृति 40–डाक्टरी थर्मामीटर

दो, दस, बीस, सौ, दो सौ, इत्यादि। एक-एक दर्जे को दस भागों में बाँट देते हैं तो हर एक भाग हुआ एक

दशमलव जिसको बिन्दु भी कह सकते हैं। मनुष्य के शरीर की गर्मी अट्ठानवे बिन्दु चार से कम हो तो शिथिलता प्रकट होती है। यदि इससे अधिक हो तो बुख़ार। यदि बुख़ार हलका ही हुआ, कोई निन्यानवे या साढ़े निन्यानवे, तो उसको हरारत कह कर पुकारते हैं।

रवि —पिताजी, माताजी का टैंपरेचर कितना निकला ?

पिताजी—एक सौ दो, बिन्दु छै। तो तुम बताओ कि कितना बुख़ार हुआ ?

रवि ने मन ही मन हिसाब लगाकर कहा, "चार बिन्दु दो दर्जे का।" पिताजी ने कहा, "बिल्कुल ठीक।"

चंदा ने पूछा, "थर्मामीटर कैसे बुख़ार बता देता है ?

पिताजी—अभी तो बतला चुके हैं कि इस थर्मामीटर में देखो एक लम्बी-सी मोटी शीशे की डंडी है। इस डंडी के बीच का हिस्सा खोखला है, जिससे एक पतली नली बन गयी है। यह नली एक ओर से तो बन्द है; दूसरी ओर एक पतली दीवाल वाली शीशे की छोटी-सी नली से जुड़ी हुई, है जिसमें पारा भरा हुआ है। इसको बल्ब कहते हैं।

डाक्टरी थर्मामीटर के अतिरिक्त एक साधारण

थर्मामीटर भी होता है। पिताजी ने डाक्टरी और साधारण थर्मामीटर की शक्ल खींचकर रवि और चन्दा को दिखलाई (आ० 39 और 40) और कहा।

देखो कि साधारण थर्मामीटर में डंडी के बीच का नल बल्ब से सीधा जुड़ा हुआ है, परन्तु डाक्टरी थर्मामीटर में यह सम्बन्ध बहुत ही पतला है और सीधा नहीं, अपितु खमदार है। इसका विशेष कारण है।

तुम तो जानते हो कि गर्मी पाने से हर एक चीज़ फैलती है, ठंडक में सिकुड़ जाती है। थर्मामीटर क बल्ब को जब गर्मी पहुँचती है तब पारा फैलता है और फैल कर नली में चढ़ता है। जब गर्मी पहुँचनी बन्द हुई, टेंपरेचर गिरने लगता है और पारा भी गिरकर बल्ब के अन्दर आ जाता है। ऐसा तभी हो सकता है जब कि पारे को बल्ब में घुसने में कोई बाधा न हो। साधारण थर्मामीटरों में इस प्रकार की कोई बाधा नहीं पड़ती और टेंपरेचर के घटने बढ़ने से नली का पारा नीचे ऊपर होता रहता है। परन्तु डाक्टरी थर्मामीटर में बल्ब और नली का सम्बन्ध महीन और ख़मदार होता है। गर्मी पाकर बल्ब का पारा जब फैलता है तब इस

पतले सूराख से पारा ऊपर चढ़ कर नली में पहुँच जाता

है। जब थर्मामीटर रोगी के मुँह से निकाल लेते हैं, तब वल्ब का टेंपरेचर कम हो जाने के कारण नली में पहुँचा हुआ पारा सिकुड़ कर बल्ब में पहुँचना चाहता है। परन्तु अब वह उस छोटे से छेद को पार नहीं कर सकता। इसलिये बल्ब में के सिकुड़े हुए पारे और नली के पारे का सम्बन्ध टूट जाता है और नली में पारे का तार जहाँ का तहाँ ही रह जाता है, और फ़ुरसत से देखा जा सकता है। वल्व की ओर झिटकने से नली के पारे को सूराख से पार कराया जा सकता है जिससे कि पारा वल्व में पहुँच जाता है और थर्मामीटर फिर काम के लिए तैयार हो जाता है।

30 – डाक्टरी थर्मामीटर और मानचित्र

डाक्टरी थर्मामीटर की नली में 95 से लेकर 110 तक के नम्बर लगे होते हैं। अर्थात् इससे 95 दरजे से 110 दरजे के टेंपरेचर नापे जा सकते हैं। दरजा लिखने के लिए एक विशेष चिन्ह है, यह है °। इस प्रकार डाक्टरी थर्मामीटर में (95°) से लेकर

(110°) तक के चिन्ह होते हैं। * हर एक दरजा पांच

पाँच हिस्सों में बँटा हुआ है। इसलिए एक हिस्सा हुआ $\frac{1}{5}$ (एक बटा पाँच) अर्थात् दशमलव या बिंदु 2 (·2°) का। जहां पर तीर का निशान है वह 98·4 (अट्ठानवे बिंदु चार) है, जो कि स्वास्थ्य के टेम्परेचर का सूचक है।

रवि—पिता जी, आपने कहा था कि मुँह में थर्मामीटर दो तीन मिनट तक ही रखना चाहिए, पर माता जी के मुँह में थर्मामीटर रख कर आप हमें थर्मामीटर की बातें बताने लगे और माता जी दस पंद्रह मिनट तक थर्मामीटर मुँह में रक्खे रहीं।

पिता जी—अधिक देर रखने में कोई हानि नहीं। ऐसा करने से थर्मामीटर का पारा अधिक नहीं चढ़ जाता। जिस दर्जे की गर्मी में बल्ब हो उससे अधिक दर्जे तक पारा कभी नहीं चढ़ सकता, चाहे कितनी देर तक रक्खा रहे।

चन्दा—पिता जी, बच्चे का टेंपरेचर कैसे ले सकते हैं? क्योंकि उसके मुँह में तो थर्मामीटर नहीं रख सकते।

---

* साधारण थर्मामीटरों में ° से लेकर 250° या 300° तक के दर्जे होते हैं।

पिता जी—थर्मामीटर बच्चों के मुँह में नहीं रखते।

या तो उसे बच्चे की बग़ल में या टाँग के जोड़ में लगाते हैं। वास्तव में बहुत से रोगी थर्मामीटर मुँह में रखना उचित नहीं समझते। उनके बग़ल में ही थर्मामीटर लगाते हैं।

चंदा—पिता जी, क्या मुँह का और बग़ल का टेंपरेचर एक ही होता है?

पिता जी—नहीं! एक तो बग़ल में रखने से पारा उतनी जल्दी नहीं चढ़ता जितनी कि मुँह में। इसलिए यदि मुँह में दो ही मिनट के लिए लगावें तो बग़ल में पाँच मिनट के लिए लगाना चाहिए। और दूसरे, प्रायः बग़ल का टेंपरेचर मुँह से कम ही निकलता है। इस लिए ठीक बुख़ार जानने के लिए बग़ल के टेंपरेचर में एक दरजा और जोड़ देना चाहिए।

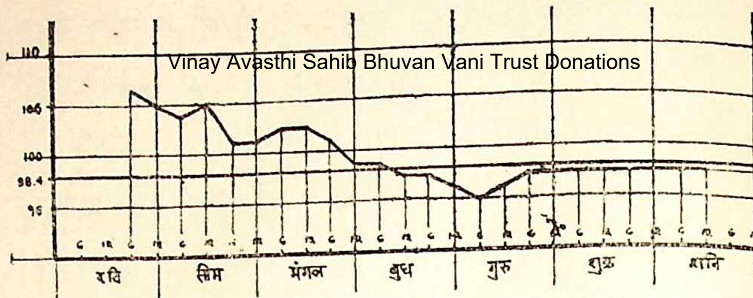
एक बात और याद रक्खो। बुख़ार देखने के अर्थात् डाक्टरी थर्मामीटर के बल्ब को कभी न छूना चाहिए। एक तो डर यह है कि सम्भवतः छूने या पकड़ने से बल्ब टूट जाय, क्योंकि यहाँ का शीशा बड़ा पतला होता है, और

दूसरे बल्ब छूने से तुम्हारे ही हाथ की गरमी से पारा चढ़

सकता है जिससे रोगी का टेंपरेचर लेने में गलती पड़ जाने का भय रहेगा।

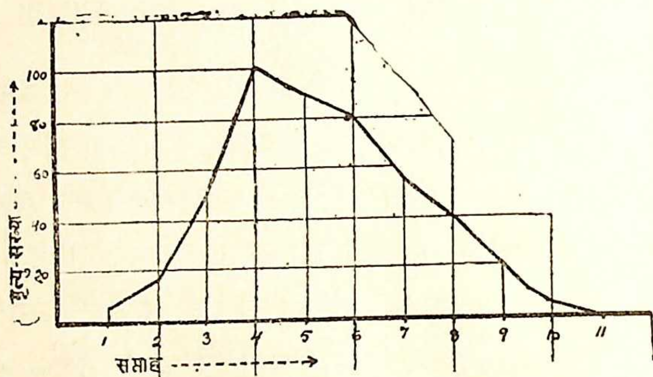
चन्दा— पिता जी, उस दिन जब माता जी अपनी एक सहेली को देखने अस्पताल गयी थीं, तब मुझे भी साथ ले गयी थीं। सब रोगियों की चारपाइयों के पास एक-एक मेज़ रक्खी थी, उस पर एक-एक तख्ती टँगी थी, जिस पर चारखानों वाला काग़ज लगा हुआ था और उस पर एक टेढ़ी मेढ़ी रेखा खींची हुई थी। वह क्या था ?

पिता जी—वह था रोगी के टेंपरेचरों का मानचित्र (आकृति 41)। अस्पताल में प्रत्येक रोगी का दिन में चार बार टेंपरेचर लिया जाता है। यह टेंपरेचर-नर्स इसी चारखानेदार काग़ज़ पर दर्ज कर देती है। एक ही काग़ज़ पर कई दिनों के टेंपरेचरों को दर्ज करने की जगह होती है। इन टेंपरेचरों के चिन्हों को एक दूसरे से मिलाने से टेढ़ी मेढ़ी रेखा बनती है; क्योंकि किसी समय टेंपरेचर अधिक होता है, किसी समय कम। डाक्टर साहब जब रोगी के पास आते हैं, तब यह रेखा देखते ही उनको पता चल जाता है कि रोगी के टेंपरेचरों की क्या अवस्था रही।



आकृति 41—रोगी के टेंपरेचर का मानचित्र।

चारखानेदार कागज़ पर केवल टेंपरेचर ही नहीं और भी तरह-तरह की बातों को जताने की रेखाएँ खींची



आकृति 42—प्लेग का मानचित्र।

जा सकती हैं। इस प्रकार के मानचित्रों को अंग्रेजी में चार्ट कहते हैं।

दो वर्ष हुए हमारे नगर में जो प्लेग की बीमारी फैली थी, उसका बढ़ाव घटाव कैसे हुआ था, यह बात

देखो कि इस मानचित्र (श्रा० 42) को देखने से ही ज्ञात हो जाती है। चारखाना काग़ज की खड़ी रेखाएँ अर्थात् ऊपर नीचे खींची हुई रेखाएँ सप्ताहों की सूचक हैं। पड़ी अर्थात् इधर से उधर खींची हुई रेखाएँ मृत्यु संख्याएँ जतलाती हैं।

31—नशा और उससे हानियाँ

रवि—पुन्नू, जो हमारे मुहल्ले में रहता है, कल शाम को खूब लड़खड़ा कर चल रहा था और अंड-बंड बक रहा था। उसको क्या हो गया था, पिताजी ?

पिताजी—उसने खूब शराब पी रक्खी होगी। शराब बड़ी बुरी बला है, जिसके मुँह एक दफा लग जाय फिर नहीं छूटती। पीने वाला सोचता है कि शराब पीने से उसका कष्ट व थकावट दूर हो जाती है; परन्तु सत्य बात तो यह है कि शराब आदमी के दिमाग़ को खराब कर देती है। उसके पीने से स्मरण शक्ति और सोचने की ताकत नहीं रह जाती। ज्ञानतन्तु अपना काम करना छोड़ देते हैं।

चंदा—पिताजी, ज्ञानतन्तु क्या होते हैं ?

पिताजी—जैसे शरीर में रगें और नसें हैं, जिनमें खून इधर-उधर जाता है, वैसे ही तार या धागे जैसे तन्तु भी शरीर में सब जगह फैले हुए हैं, जिनका एक सिरा मस्तिष्क (दिमाग) में जाता है। देखना, सुनना सूँघना, चाखना, छूना, चुभना, ठंढा, गरम, आदि सभी चीज़ों का ज्ञान हमें तभी होता है जब कि इन तारों पर चल कर खबर हमारे दिमाग़ में पहुँचती है। इन्हीं ज्ञान कराने वाले तारों का नाम ज्ञान-तन्तु है।

रवि—तो इसीलिए पुन्नू को अपने पैरों पर और दिमाग़ पर कुछ काबू नहीं रह गया था।

पिताजी—हाँ बेटा ! शराब पीने से दिमाग़ में एक परदा-सा पड़ जाता है जिसके कारण न तो ज्ञान तन्तुओं से लाई हुई खबरें दिमाग़ को ठीक-ठीक मिलती हैं और न ही दिमाग़ इन ज्ञान तन्तुओं के द्वारा शरीर के विविध अंगों को ठीक-ठीक आज्ञा भेज सकता है कि ऐसा करो या ऐसा न करो। इसलिए मनुष्य की सुध-बुध जाती रहती है। उसको अपने आप पर काबू नहीं रहता और वह लड़खड़ाने तथा बकने लगता है। कभी-कभी तो इतना पी लेता है कि बेहोश होकर सड़क पर या नालियों में गिर पड़ता है। जब नशा टूटता है तब उसकी और भी

बुरी दशा होती है। [illegible] हाथ, पैर, सिर, हिलने लगते हैं; अन्त में बिल्कुल रोगी होकर शीघ्र ही मर जाता है। शराबी समझता है कि शराब पीने से उसको भूख अधिक लगती है, परन्तु यह सब उसका भ्रम-मात्र है, भूल है। भूख नहीं, झूठी भूख लगती है, जिसके कारण वह खा तो बेशक अधिक जाता है परन्तु पीछे से अधिक खाने से जो हानि और कष्ट होते हैं, वे उठाने पड़ते हैं।

केवल शराब ही ऐसी चीज़ नहीं जिससे नशा होता है और ये सब कष्ट, हानि, आपत्तियाँ, होती हैं। भाँग भी ऐसी ही चीज है।

चंदा—हाँ पिता जी! परसों सोनू ने भंग पी ली और इतनी रोटियाँ खायीं कि माता जी पकाती-पकाती तंग आ गयीं।

रवि —और दूसरे दिन उससे उठा भी नहीं जाता था। सिर में चक्कर आ रहे थे और पेट भी खराब हो गया था।

चंदा—पिता जी हमारा जो पंखा कुली है, वह हर समय ऊँघता रहता है। माता जी कहती हैं कि वह अफ़ीम खाता है।

पिता जी—हाँ बेटा ! अफ़ीम भी नशीली चीज है और अति हानिकारक है। अफ़ीम खाने से नींद बहुत आती है। इसीलिए कई मूर्ख माताएँ अपने आराम के लिए छोटे बच्चों को ज़रा सी अफ़ीम चखा देती हैं, जिससे बच्चा सोता रहता है और आप आराम में रहती हैं परन्तु बच्चे का सारा जीवन ख़राब हो जाता है।

चंदा—वह कैसे ?

पिता जी—अफ़ीम से बच्चा बड़ा होने पर मन्द बुद्धि वाला निकलता है, स्मरण तथा सोच-विचार की शक्ति कम हो जाती है। इसी तरह की और भी कई एक नशे की चीज़ें हैं, जैसे चरस, गाँजा, आदि।

रवि—पिता जी, हम ने तो इनका नाम भी नहीं सुना है।

पिता जी—नाम न सुनना ही अच्छा है। ये तंबाकू की तरह पिये जाते हैं। वास्तव में तंबाकू पीना या खाना बड़ी बुरी बला है। जिसको लग जाती है, छुड़ाये नहीं छूटती। तंबाकू में एक ऐसा विष होता है कि जो यदि शुद्ध रूप में शरीर में चला जाय, तो आदमी मर जाता है। तंबाकू के अधिक प्रयोग से गला ख़राब हो जाता है,

नींद कम आने लगती है, दिल कमजोर हो जाता है।

छोटी उमर में तो तम्बाकू सेवन अत्यन्त ही हानिकारक है। इसीलिए सरकार ने कानून बना दिया है कि नाबालिग बच्चे तम्बाकू न पियें। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि तम्बाकू भी एक प्रकार का नशा है और बच्चो! एक बात मेरी सदा के लिए याद रखना—

जो चाहते हो खुशी से जीना,
नशा न पीना, नशा न पीना।

32—गाँवों की सफाई

रवि, चन्दा, माता जी और पिता जी, चारों जने पास के गाँव में आये हुए थे। गाँव की गंदगी देख कर पिताजी ने कहा—

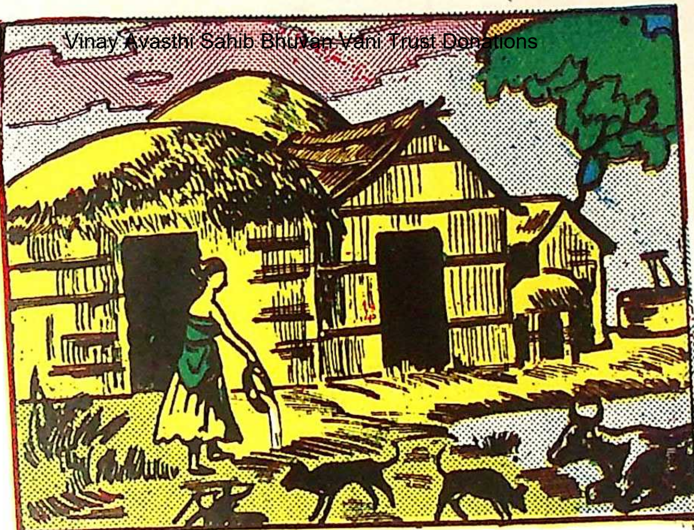
आज हम गाँव वालों को बतायेंगे कि गाँव में सफ़ाई रखनी चाहिए और कैसे। चलो यहाँ के नम्बरदार अर्थात् गाँव के मुखिया से मिलें और उससे कहें कि गाँव में डौंडी पिटवा कर सब लोगों, स्त्री-पुरुषों को इकट्ठा कर ले, ताकि आज हम उन्हें गाँव को साफ़ रखने तथा उनके हित की और भी बहुत सी बातें बतायें। इस गाँव का नम्बरदार मुझसे बहुधा मिलता रहता है।

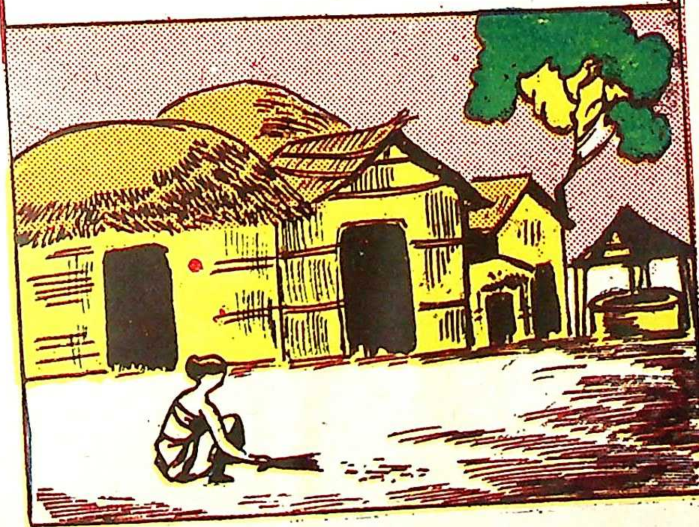
जब सारे गाँव वाले एक जगह इकट्ठे हो गये तब पिताजी ने कहा—

बहिनो और भाइयो ! आज मैं तुम्हें कुछ बातें बतलाना चाहता हूँ जिन को करने से तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और मन प्रसन्न रहेगा, जिससे आप सब लोग अच्छी प्रकार अपना-अपना काम कर सकेंगे। यह सब तभी हो सकता है जब आप लोगों के घरों में और गाँव की गलियों में तथा और सब जगह ठीक तरह से सफ़ाई रहे।

पहले तो मैं आपको यह बताऊँगा कि सफ़ाई करने और रखने की आदर्श विधियाँ क्या हैं। उद्देश्य यह होना चाहिए कि किसी तरह से ये आदर्श रीतियाँ आप अपनायें और जब उद्देश्य सामने रख कर काम करते हैं तब किसी न किसी तरह से उस पर पहुँच भी सकते हैं। जब संकल्प कर लें तब सब कुछ किया जा सकता है।

सफ़ाई की आदर्श विधियाँ ये हैं। पहले पहल तो मकान साफ़ रखने चाहिए। प्रतिदिन हर कोठरी, दालान, आँगन में झाड़ू लगानी चाहिए। कमरों, कोठरियों, में केवल दरवाज़े, ही नहीं, खिड़कियाँ भी होनी चाहिए।





खिड़कियाँ आदि दिन में कम से कम थोड़ी देर के लिए तो अवश्य खुली रखनी चाहिएँ ताकि ताज़ी हवा खुली तौर से आ जा सके, उजाला भी हो जाय। आप लोगों ने सुना होगा कि बहुत सी बीमारियों के कारण रोगाणु हैं। रोगाणु ताज़ी हवा और उजाले में नहीं पल-पुस सकते।

घर का गंदा पानी ठीक तरह से निकलने के लिए पक्की नालियाँ होनी चाहिएँ, जिनसे निकल कर गंदा पानी एक पक्के हौज़ में इकट्ठा हो। हौज़ ठीक तरह से ढक कर रक्खा जाय और रोज़ उसका गंदा पानी निकाल कर बाहर गाँव से दूर, उचित स्थान पर फेंका जाय।

यदि किसी के पास गाय, भैंस, बैल आदि हों तो इन पशुओं के लिए कोई अलग कोठरी या दालान होनी चाहिए। हो सके तो पशु-घर अपने रहने के घर से अलग हो। यदि अलग बनाने की जगह न हो तो कम से कम अपने घर ही में एक अलग जगह पशुओं के लिए होनी चाहिये। कम से कम इस पशु कोठरी या दालान का फ़र्श तो अवश्य पक्का होना चाहिए; यद्यपि आदर्श बात तो यह होगी कि सारे कमरे, कोठरी, दालान आदि के फ़र्श पक्के हों। पशु-शाला की भी सफ़ाई रोज़ होनी चाहिए। पक्का फ़र्श तो रोज़ पानी से धोया जाना

चाहिए । यदि फर्श कच्चा हो, तो झाड़ रोज़ लगाना चाहिए और कभी-कभी लिपाई-पुताई भी होनी चाहिये ।

केवल घरों में ही नहीं, बाहर गलियों में भी पक्की नालियाँ दोनों ओर होनी चाहिएँ । गलियों को भी रोज़ झाड़ू लागाना चाहिए जिस के लिए जमादार या जमा-दारिन रक्खे जा सकते हैं । गलियों से दिन में दो बार गोबर उठवाना चाहिए । एक बार तो जब गाय भैंस घर से बाहर मैदानों की घास चराने और हवा खिलाने लिए ले जायी जावें और और दूसरी बार जब वे मैदान से लौटकर घरों में आवें ।

गोबर उठाना तो शायद घर की स्त्रियाँ स्वयं कर सकती हैं । प्रायः लोग गोबर के उपले बनाकर जलाने के काम में लाते हैं । यदि जलाने के लिये लकड़ियाँ आसानी से मिल सकें तो गोबर के कंडे (उपले) न बनाने चाहिये । कंडों की आग में एक तो धुआँ अधिक और आँखों के लिए अधिक कडुआ होता है । दूसरे, गोबर से बड़ी अच्छी खाद बनती है । गाँव भर का सारा गोबर एक ही जगह किसी खास बनाये हुए गढ़े में डाल देना चाहिए और मिट्टी से दबा कर रखना चाहिए । कुछ

दिनों के बाद, बिना और कुछ भी किये ही, गोबर की

खाद बन जायगी। गोबर यदि गलियों में ही पड़ा रहे तो दुर्गन्ध आवेगी, मक्खियों की भरमार होगी और देखने में तथा चलने के लिए कैसा बुरा होगा। मक्खियों की करतूतों के बारे में तो आप लोगों ने पहले ही सुना होगा।

शौचादि के लिए आप लोग सब शायद बाहर खेतों और मैदानों में जाते हैं। सबसे अच्छी बात तो यही होगी कि घरों में ही ठीक तरह की टट्टियाँ हों। परन्तु यदि घर में ऐसी टट्टियाँ न बनवा सकें और बाहर मैदानों ही में जाना हो तो एक खुरपा क्यों न साथ लेते जायें? खुरपे से खोद कर, छोटा-सा गड्ढा बनाकर उसमें टट्टी करें और पीछे से खोदी हुई मिट्टी से गड्ढा फिर भर दें। एक तो चारों ओर बदबू नहीं फैलेगी और दूसरे थोड़े दिनों में मैले की खाद बन जायगी।

घरों का तथा गलियों का कूड़ा, करकट, मैला, सब इकट्ठा करके ख़ास खोदे हुए बड़े-बड़े गड्ढों में दबा रखना चाहिए—जलाना नहीं चाहिए। इस प्रकार दबा कर रखने से थोड़े दिनों के बाद उसकी भी खाद बन जायगी। जलाने से सब नष्ट हो जाता है, धुआँ घाल

(झुँगे) में मिलता है। दबा कर रखने से बदबू फैलने

का भी डर नहीं रहता।

मुझे यह जान कर खुशी हुई कि आपके छोटे से गाँव में भी दो तीन कुएँ हैं और वे भी गहरे-गहरे। जितनी गहराई पर पानी होता है उतना ही साफ होता है। केवल एक बात आपके कुओं के बारे में कहनी है। कुओं को भी ढक कर रखना चाहिए। हो सके तो उनके ऊपर एक एक छोटी सी छत बना देनी चाहिए; ताकि कूड़ा, करकट, अत्त-पत्त, उड़ कर कुएँ में न जा गिरें और आपके पीने के पानी को गंदा न कर दें, क्योंकि गंदा पानी पीने से बीमारियाँ फैलतीं हैं।

आप लोग निस्सन्देह मन ही मन कह रहे होंगे कि यह सब करने के लिए रुपया चाहिए और इतना रुपया आपके पास कहाँ। मैंने शुरू में ही कह दिया था कि पहले मैं आप लोगों को आदर्श बातें बतलाऊँगा। परन्तु रुपया न होते हुए भी यदि आपके मन में यह बात एक बार अच्छी प्रकार से बैठ जाय कि जैसा आदर्श मैंने आपके सामने रक्खा है उस तक एक न एक दिन अवश्य पहुँच कर ही रहेंगे; यदि ऐसा संकल्प कर लें तो भी बहुत कुछ हो सकता है। पक्की नालियाँ, पक्के हौज

फर्श न ही सही, परन्तु कच्ची नालियाँ आदि तो आप

खुद बना सकते हैं। और हौज, गली आदि साफ रखने के लिए पास की सरकारी सड़क साफ़ करने वाले जमादार को सब लोग मिल कर दो तीन रुपये महीना तो दे सकते हैं।

यदि आप इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा शुरू करके इस बात में अपना उत्साह दिखलावें तो मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि आपका उत्साह देख कर सरकार स्वयं सहायता देने को तैयार हो जायगी। कहते हैं कि "हिम्मते मरदाँ, मददे खुदा"। इस बात में ईश्वर से प्रार्थना करने की आवश्यकता नहीं। हिम्मत मरदाँ, मदद सरकार। इसी प्रकार "हारिये न हिम्मत, बिसारिये न राम" की जगह कहिए "हारिये न हिम्मत, बिसारिये न राज"।

———